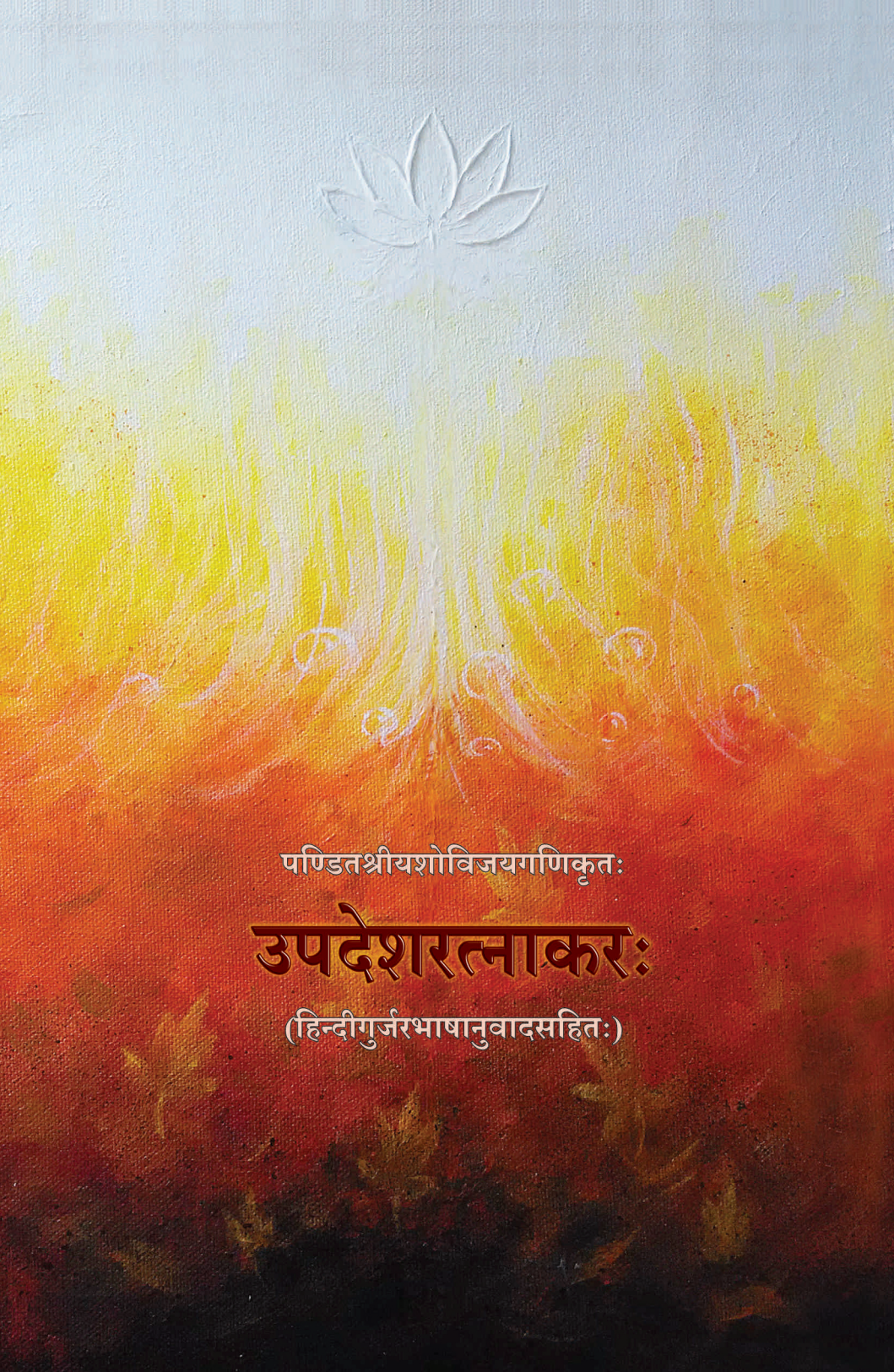

पण्डितश्रीयशोविजयगणिकृतः

उपदेशरत्नाकरः

(हिन्दीगुर्जरभाषानुवादसहितः)

पण्डितश्रीयशोविजयगणिविरचितः

उपदेशरत्नाकरः

(हिन्दीगुर्जरभाषानुवादसहितः)

श्रुतभवनसंशोधनकेन्द्रम्

पुणे

श्रुतदीपग्रन्थश्रेणिः २८

ग्रंथनाम - उपदेशरत्नाकर
मूलकर्ता - पण्डित यशोविजयगणी
विषय - उपदेश
सम्पादक - मुनिवैराग्यरतिविजयगणी
सह सम्पादक - मंजुनाथ भट्ट
अनुवाद - हिंदी - मंजुनाथ भट्ट,
गुजराती - सा.श्री मधुरहंसाश्रीजी, सा.श्री धन्यहंसाश्रीजी
प्रकाशक - श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन - श्रुतभवन संशोधन केंद्र, पुणे
पत्र - १६ + ५६ = ७२
आवृत्ति - प्रथम, वि.सं.२०७५, ई.२०१९
मूल्य - १०० रु.
स्वामित्व - श्रमणसंस्थाधीनश्रुतदीपानुसन्धानसंस्थानम्।
ISBN - 978-81-941972-6-3

-: प्राप्तिस्थल :-

पुणे : **श्रुतभवन संशोधन केन्द्र**
४७/४८ अचल फार्म, आगम मंदिर से आगे,
सच्चाई माता मंदिर के पास, कात्रज, पुणे-४११०४६
Mo.7744005728 (9-00am to 5-00pm)
www.shrutbhavan.org Email : shrutbhavan@gmail.com

अहमदाबाद : **श्री उमंगभाई शाह**
बी-४२४, तीर्थराज कॉम्प्लेक्स, वी. एस. हॉस्पिटल के सामने
मादलपुर, अहमदाबाद. मो.०९८२५१२८४८६

मुंबई : **श्री गौरवभाई शाह**
सी/१११, जैन एपार्टमेंट, ६० फीट रोड, देवचंद नगर रोड,
भायंदर (वेस्ट) मुंबई-४०११०१. मो.०९८३३१३९८८३

सुरत : **श्री सेवंतीलालभाई मेहता**
ओंकारसूरि ज्ञानमंदिर, सुभाष चौक,
गोपीपुरा, सुरत - ३९५००१ मो. ९८२४१५२७२७

मुद्रण : **नूतन आर्ट,** अहमदाबाद

प्रकाशकीय

महोपाध्याय राजविमलगणी के शिष्य पंडित श्री **यशोविजयगणी** के द्वारा विरचित **उपदेशरत्नाकर** ग्रंथ श्रीसंघ के करकमल में समर्पित करते हुए हमे आनंद की अनुभूति हो रही है। श्रुतभवन संशोधन केंद्र के सन्निष्ठ समर्पित सहकारिगण की कडी महेनत और लगन से यह दुर्गम कार्य संपन्न हुआ है। इस अवसर पर श्रुतभवन संशोधन केंद्र के संशोधन प्रकल्प हेतु गुप्तदान करने वाले दाता एवं श्रुतभवन संशोधन केंद्र के साथ प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से जुडे हुए सभी महानुभावों का हार्दिक अभिनंदन करते हैं। हम उन संस्था एवं विद्वानों के भी आभारी है जो हमें मार्गदर्शन और सहाय करते हैं।

इस ग्रंथ के प्रकाशन का अलभ्यलाभ परम पूज्य मुनिप्रवरश्री **आत्मरति-हितरतिविजयजी** म.सा. की प्रेरणा से **श्री संभवनाथ महाराज ट्रस्ट, कराड**ने ज्ञानद्रव्य से प्राप्त किया है। आपकी अनुमोदनीय श्रुतभक्ति के लिये हम आपके आभारी है। अक्षरयोजन का कार्य नूतन आर्टस् के धर्मेशभाई पटेल ने उत्साह से किया। एतदर्थ उनको धन्यवाद।

डॉ. जितेंद्र शाह
(मानद विश्वस्त)

सम्पादकमण्डलम्

मुनिश्रीवैराग्यरतिविजयगणी (अभिवीक्षकः)
डॉ. विनया क्षीरसागर (मार्गदर्शिका)
अमित उपाध्ये (विभागप्रमुखः) **कृष्णा माळी** (सहायकः)
अतुल मस्के (सहायकः) **मञ्जुनाथ भट्टः** (सह सम्पादकः)
वैभव पाटील (सहायकः)
वर्धमानजिनरत्नकोशविभागः (सहायकः)

श्रुतप्रेमी

वि.सं. १९९३-१९९४मां अमारा संघने पावन करनारा
महाराष्ट्र देशोद्धारक
परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचंद्रसूरीश्वरजी महाराजाना
साम्राज्यवर्ती
पूर्वभारतकल्याणकभूमितीर्थोद्धारक परम पूज्य
आचार्यदेव श्रीमद् विजय **मुक्तिप्रभसूरीश्वरजी** म.सा.नी प्रेरणाथी
वि.सं. २०७४ मां
परम पूज्य तपस्वी मुनिप्रवरश्री **आत्मरतिविजयजी** म.सा.
परम पूज्य मुनिप्रवरश्री **हितरतिविजयजी** म.सा. नी
निश्रामां संघमां थयेल विशिष्ट आराधना अने
प्रभावकमय चातुर्मासनी स्मृतिमां
तेमज प्रवर्तिनी सा. श्री **जयाश्रीजी** म.ना
परम पूज्य साध्वीजी श्री **उत्तमगुणाश्रीजी** म.
तथा परम पूज्य साध्वीजी श्री **अमृतयशाश्रीजी** म. ना
संयम जीवनना ५० वर्षनी अनुमोदनार्थे
श्री संभवनाथ महाराज ट्रस्ट, कराडना ज्ञानद्रव्यमांथी तेमज
संघना श्राविकाबेनोनी आवश्यक क्रियानी उपजमांथी

अनुक्रमणिका

		पत्राङ्कः
પ્રસ્તુતિ	**મુ. વૈરાગ્યરતિવિજયજી ગણી**	**६**
प्रस्तुति (हिंदी अनुवाद)		**८**
प्रस्तुतिः (संस्कृत अनुवाद)	**मंजुनाथ भट्ट**	**१०**
सम्पादकीयम्		**१२**
उपदेशरत्नाकरः (संस्कृतच्छायासहितः)		**१**
उपदेशरत्नाकरस्य राष्ट्रभाषासारानुवादः		**१९**
उपदेशरत्नाकरस्य गुजरातीभाषासारानुवादः		**२९**
परिशिष्टानि		
प्रथमं परिशिष्टम् —उपदेशरत्नाकरोपदिष्टविषयसूचिः।		**३९**
द्वितीयं परिशिष्टम् —उपदेशरत्नाकरोपदिष्टदृष्टान्तसूचिः।		**४३**
तृतीयं परिशिष्टम् —उपदेशरत्नाकरस्थविशेषनामसूचिः।		**४७**
चतुर्थं परिशिष्टम् —संदर्भग्रंथसूचि।		**४८**

પ્રસ્તુતિ

ઉપદેશરત્નાકર એક ઉપદેશપરક કૃતિ છે. તેના કર્તા પરમ પૂજ્ય આચાર્યશ્રી આનંદવિમલસૂરિજીના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શ્રી રાજવિમલજી મહારાજના શિષ્ય પંડિત શ્રી **યશોવિજયજી** ગણિવર છે. આ ગ્રંથમાં એક એક ગાથામાં એક એક ઉપદેશવિષયક એક એક દૃષ્ટાંત પ્રસ્તુત કરવામાં આવ્યું છે. દૃષ્ટાંતની વિચારણાથી વૈરાગ્ય પુષ્ટ થાય અને આત્મિક સુખ પ્રગટ થાય એ આ સંકલન પાછળનો ગ્રંથકારનો હેતુ છે. પહેલી ગાથામાં જણાવ્યા પ્રમાણે આવા સો દૃષ્ટાંતોનું સંકલન આ ગ્રંથમાં છે. તેથી તેનું અપરનામ **ઉપદેશશતક** અથવા **વિવિધોપદેશશતક** પણ હોઇ શકે છે.

આ લઘુ જણાતી કૃતિ અર્થસભર છે. તેના કેટલાક દૃષ્ટાંતો અપ્રચલિત છે. તેના મૂળ સ્થળ ગોતવા જોઇએ. તેમજ આ ગ્રંથ ઉપર કથાનકોને સ્પષ્ટ કરતી ટીકાનું નિર્માણ થાય તો તેની ઉપાદેયતા વધશે.

ઉપદેશરત્નાકર નામની બે કૃતિઓ મળે છે. તેનો ઉલ્લેખ નીચે મુજબ છે.

૧. **ઉપદેશરત્નાકર -** કર્તા- વિદ્યાભૂષણ (શ્રાવકાચાર)/ દિગંબર/ ભાષા-સંસ્કૃત/ અપ્રકાશિત

૨. **ઉપદેશરત્નાકર -** કર્તા- મુનિસુંદરસૂરિ/ ભાષા- સંસ્કૃત+પ્રાકૃત/ ૧૫વી સદી/ પ્રકાશિત/ ગાથા-૨૭૦

પ્રસ્તુત કૃતિ કાળના ગર્ભમાં છૂપાયેલી હતી. તેની એક માત્ર પ્રત મુંબઇના શ્રી મોહનલાલ જૈન સેંટ્રલ લાઇબ્રેરીમાંથી મળી છે. તેની સ્કેન કોપી ઉપલબ્ધ કરાવવા માટે તેના કાર્યવાહકો શ્રી નીતિનભાઇ સોનાવાલા આદિ અભિનંદનને પાત્ર છે. તેમની અનુપમ ઉદારતાને કારણે આ ઉત્તમ કૃતિ ૪૦૦ વરસ બાદ પ્રકાશમાં આવી છે. આપણાં હસ્તલિખિત જ્ઞાનભંડારોમાં આવી અનેક અપરિચિત કૃતિઓ ઉદ્ધારની રાહ જોઇ રહી છે.

શ્રી મંજુનાથ ભટ્ટે તેનું કાળજીપૂર્વક સંપાદન કર્યું છે. તે માટે તેઓ સાધુવાદને પાત્ર છે. આ તેમનો પ્રથમ પ્રયાસ છે. સંપાદનની દુનિયામાં તેમનું

સહર્ષ સ્વાગત કરીએ. સાધ્વીજી શ્રી **જિનરત્નાશ્રીજી** મ.ના શિષ્યા સાધ્વીજી શ્રી **મધુરહંસાશ્રીજી** તેમજ સાધ્વીજી શ્રી **ધન્યહંસાશ્રીજી** મહારાજે ગુજરાતી સારાનુવાદ કર્યો છે. વિદુષી સાધ્વીજી શ્રી **ચંદનબાલાશ્રીજી**એ આ ગ્રંથની અંતિમ આદર્શશુદ્ધિ કરી છે. તેમની શ્રુતભક્તિની અનુમોદના કરું છું.

કૃતજ્ઞતા

મારા પરમ ઉપકારી ગુરુદેવ પરમ પૂજ્ય **આચાર્યદેવ શ્રીમદ્ વિજય રામચંદ્રસૂરીશ્વરજી મહારાજા** તથા પિતૃગુરુદેવ પરમ પૂજ્ય **મુનિપ્રવરશ્રી સંવેગરતિવિજયજી મ.સા.**ની પાવન કૃપા, બંધુમુનિવરશ્રી **પ્રશમરતિવિજયજી મ.**નો સ્નેહભાવ તથા તેમ જ **મુનિવરશ્રી સંયમરતિવિજયજી મ.**, પરમ પૂજ્ય **સાધ્વીજી શ્રીહર્ષરેખાશ્રીજી મ.**ના શિષ્યા **સાધ્વીજી શ્રીજિનરત્નાશ્રીજી મ.**, સા. **શ્રી મધુરહંસાશ્રીજી મ.**, સા. **શ્રી ધન્યહંસાશ્રીજી મ.**નો નિરપેક્ષ સહાયકભાવ મારી પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિની આધારશિલા છે. તેમના ઉપકારોથી મુક્ત થવું સંભવ નથી.

- વૈરાગ્યરતિવિજય

प्रस्तुति

उपदेशरत्नाकर यह एक उपदेशपरक कृति है। उसके कर्ता परम पूज्य आचार्यश्री आनंदविमलसूरिजी के शिष्य उपाध्याय श्री राजविमलजी महाराज के शिष्य पंडित श्री यशोविजयजी गणिवर है। इस ग्रंथ में एक एक गाथा में एक एक उपदेशविषयक एक एक दृष्टांत प्रस्तुत किया है। दृष्टांत की विचारणा से वैराग्य पुष्ट करना और आत्मिक सुख प्रकट करना यह इस संकलन के पीछे ग्रंथकार का हेतु है। पहली गाथा के अनुसार सौ दृष्टांतों का संकलन इस ग्रंथ में है। अतः उसका अपरनाम **उपदेशशतक** अथवा **विविधोपदेशशतक** भी हो सकता है।

यह छोटी लगनेवाली कृति अर्थपूर्ण है। इसके बहुतांश दृष्टांत अप्रचलित है। उसका मूल स्थल ढुंढना चाहिए। साथ ही इस ग्रंथ पर कथानकों को स्पष्ट करनेवाली टीका का निर्माण हुआ तो इसकी उपयोगिता बढेगी।

उपदेशरत्नाकर नाम की दो कृतियाँ मिलती है। उनका उल्लेख नीचे दिया है-

१. **उपदेशरत्नाकर -** कर्ता- विद्याभूषण (श्रावकाचार)/ दिगंबर/ भाषा-संस्कृत/ अप्रकाशित

२. **उपदेशरत्नाकर -** कर्ता- मुनिसुंदरसूरि/ भाषा- संस्कृत+प्राकृत/ १५वी सदी/ प्रकाशित/ गाथा-२७०

प्रस्तुत कृति काल के गर्भ में छिपी हुई थी। उसकी एक मात्र प्रत मुंबई की श्री मोहनलाल जैन सेंट्रल लायब्रेरी में से मिली है। उसकी स्केन कोपी उपलब्ध कराने के लिए उसके कार्यवाहक श्री नीतिनभाई सोनावाला आदि अभिनंदन के पात्र है। उनकी अनुपम उदारता के कारण यह उत्तम कृति ४०० साल के बाद प्रकाश में आयी है। हमारे हस्तलिखित ज्ञानभंडारों में ऐसी अनेक अपरिचित कृतियाँ उद्धार की प्रतीक्षा में है।

श्री मंजुनाथ भट्ट ने इसका ध्यानपूर्वक संपादन किया है। उसके लिए वह साधुवाद के पात्र है। यह उनका प्रथम प्रयास है। संपादन की दुनिया में उनका

सहर्ष स्वागत है। साध्वीजी श्री **जिनरत्नाश्रीजी** म. की शिष्या साध्वीजी श्री **मधुरहंसाश्रीजी** एवं साध्वीजी श्री **धन्यहंसाश्रीजी** महाराज ने गुजराती सारानुवाद किया है। विदुषी साध्वीजी श्री **चंदनबालाश्रीजी** ने इस ग्रंथ की अंतिम आदर्शशुद्धि की है। उनकी श्रुतभक्ति की अनुमोदना करता हुँ।

कृतज्ञता

मेरे परम उपकारी परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय **रामचंद्रसूरीश्वरजी** महाराजा, पितृगुरुदेव परम पूज्य मुनिप्रवरश्री **संवेगरतिविजयजी** म.सा. की पावन कृपा, बंधुमुनिवरश्री **प्रशमरतिविजयजी** म. का स्नेहभाव एवं परम पूज्य साध्वीजी **श्रीहर्षरेखाश्रीजी** म. की शिष्या साध्वीजी **श्रीजिनरत्नाश्रीजी** म., सा. श्री **मधुरहंसाश्रीजी** म., सा.श्री **धन्यहंसाश्रीजी** म.का निरपेक्ष सहायकभाव मेरी प्रत्येक प्रवृत्ति की आधारशिला है। आप के उपकारों से उऋण होना संभव नहीं है।

- वैराग्यरतिविजय

प्रस्तुतिः

उपदेशरत्नाकरः उपदेशविधायिकैका लोकोपयोगिनी कृतिर्वर्तते। नानाप्रकारान् उपदेशान् विधत्त इत्यत ग्रन्थोऽयम् उपदेशरत्नाकरनाम्नाख्यायते। ग्रन्थस्यास्य कर्ता परमपूज्याचार्यश्रीआनन्दविमलसूरिशिष्यः उपाध्यायश्री-राजविमलशिष्यपण्डितश्रीयशोविजयगणी राराजते। ग्रन्थेऽस्मिन् प्रत्येकस्यां गाथायाम् उपदेशविषयको दृष्टान्तो वरीवृत्यते। ग्रन्थस्यास्य निर्मितौ दृष्टान्तमाध्यमेन वैराग्यविषयिकासक्तिः आत्मसुखस्याविष्कारः च सङ्कलनस्यास्य प्रधानं लक्ष्यम् इति बोबुद्ध्यते। आद्यगाथानुसारेण ग्रन्थेऽस्मिन् दृष्टान्तशतानां सङ्कलनं विद्यत इत्यत एवास्यापरं नाम **उपदेशशतकं विविधोपदेशशतकं** वा परिकीर्त्यते।

यद्यपि लघुकृतिरिति भासमानेयं समृद्धं विस्तृतम् अर्थं प्रददातीत्यत्र नास्ति विचिकित्सा। ग्रन्थेऽस्मिन् विद्यमाना दृष्टान्ता लोके बाहुल्येनाप्रचलिताः। अतः तेषां मूलं किमिति द्रष्टव्यम्। तथा चोपाख्यानं स्पष्टयितुं ग्रन्थं प्रस्तुत्य कापि टीका यदि स्यात् तदा ग्रन्थस्यास्य उपयोगोऽवर्धिष्यत।

उपदेशरत्नाकरनाम्ना कृतिद्वयम् उपलभ्यते। तस्योल्लेखो यथा—

१. दिगम्बरसम्प्रदायस्थश्रावकाचार्यश्रीविद्याभूषणकृतः संस्कृतभाषया निबद्धो ग्रन्थोऽधुनाप्यप्रकाशितः।

२. तथा च पञ्चदशतमशताब्दौ मुनिसुन्दरसूरिकृतः संस्कृतप्राकृतभाषयालङ्कृतः सप्तत्युत्तरद्विशतगाथायुक्तो ग्रन्थः प्रकाशितः।

मोहनलालजैनसेण्ट्रल्भाण्डागारतो लब्धस्य हस्तलेखस्याङ्कीयप्रतिकृतिं (soft copy) प्रापयितुं कार्यकर्तृणा सोनावालेत्युपाह्वेन श्रीनीतिनभाईमहोदयेन बहुधा प्रयासोऽकारि। तस्मात् सोऽभिनन्दनीयः। तस्यानुपमोदारतयोत्तमा कृतिरियं शतचतुष्टयवत्सरानन्तरं प्राकाश्यम् एति। एवम् अनेकेषु हस्तलिखितभाण्डागारेषु विद्यमानापरिचितकृतयोऽपि स्वकीयम् औन्नत्यम् एव प्रतीक्षन्ते।

श्रीमञ्जुनाथभट्टो ग्रन्थम् अमुं समपीपदद् इत्यतः सोऽप्यभिनन्दनीयः। कृतिरियं तस्याद्यः प्रयास इति सम्पादनक्षेत्रे तस्य सहर्षं स्वागतम्। साध्वी**श्रीजिनरत्नाश्री**णां

शिष्याभिः साध्वीश्री**मधुरहंसाश्री**-साध्वीश्री**धन्यहंसाश्रीभिः** गुर्जरसारानुवादः कृतः। विदुषीभिः साध्वीश्री**चन्दनबालाश्री**भिः ग्रन्थस्यास्यान्तिमादर्शशुद्धिः कृता। तासां श्रुतभक्ति-र्मयानुमोद्यते।

कृतज्ञता

प्रस्तावेऽत्र सर्वस्मिन्नपि सम्पादनादिकार्यकलापे मामुपकाराभिवर्षणेना-प्लावितवतां परमगुरुवराचार्यवर्य - श्रीमद्विजय**रामचन्द्र**सूरीश्वराणां पितृगुरु-मुनिप्रवर - श्री**संवेगरति**विजयानां साहाय्यादिप्रदानेन चोपकृतवतो अनुजस्य मुनिप्रवरश्री**प्रशमरति**विजयस्य पूज्यसाध्वीश्री**हर्षरेखा**श्रीशिष्या-साध्वीश्री**जिनरत्नाश्री**-साध्वीश्री**मधुरहंसा**श्री-साध्वीश्री**धन्यहंसाश्री**णां च सविनयं सादरमपि कृतज्ञतामावेदयामि।

- वैराग्यरतिविजयः

संस्कृतानुवादकः
भट्टोपाह्वः मञ्जुनाथः

सम्पादकीयम्

प्रस्तावना —

महोपाध्यायश्रीराजविमलगणिशिष्येण पण्डितश्रीयशोविजयगणिना विरचितो द्व्यधिकशतोत्तरगाथायुक्तः प्राकृतभाषयालङ्कृतो ग्रन्थोऽत्र सम्पिपादयिषितः। दृष्टान्तमाध्यमेन सामान्यनीतिविषयक आध्यात्मिकः च उपदेशो ग्रन्थस्यास्य विषयो वर्तते। स चायं पूर्वम् अप्रकाशितत्वात् सम्यक्सम्पाद्य प्रकाश्यते।

कृतिपरिचयः —

उपदेशाः सामान्यजनानां बुद्धिविवर्धनाय, व्यवहारज्ञानायोत्तमाचरणाया-ध्यात्मिकविषये प्रवर्तनाय च प्रोच्यन्ते। ये उपदेशं सम्यक्परिपालयन्ति तेऽग्निषु काञ्चनम् इव कदापि न श्यामायन्ते। यथोक्तम्—

उपदेशं विदुः शुद्धं सन्तस्तमुपदेशिनः।

श्यामायन्ते न विद्वत्सु यः काञ्चनमिवाग्निषु॥ **[माल.२.९]** इति।

अत उपदेशाः सुभाषिततुल्या इत्युच्यन्ते। नैके ग्रन्थकर्तारः उपदेशसङ्ग्रहात्मकान् ग्रन्थान् रचयामासुः। तेष्वेकतमो **उपदेशरत्नाकरा**भिधेयो ग्रन्थोऽत्र प्रस्तूयते।

ग्रन्थेऽस्मिन् स्वशिष्यस्य विकासम् एवोपलक्ष्य ग्रन्थकृतोपदेशसङ्ग्रहो व्यरचि। उपेत्युपसर्गपूर्वकाद् अतिसर्जनार्थस्य दिश्-धातोः भावे घञ्-प्रत्यये विहित उपदेशशब्दो निष्पद्यते। उपसर्गबलाद् उपदेशशब्दस्य बोधनम् अर्थः। रत्नाकरशब्दस्य सागरम् इत्यर्थः। उपदेशो रत्नाकर इव उपदेशरत्नाकरः। कदापि उपदेशस्य समाप्तिर्न भवति रत्नाकरसादृश्याद् इत्येकोऽर्थः। उपदेशेन रत्नान् आकरोतीत्युपदेशरत्नाकरः गुरुः। नाम गुरवः स्वकीयोपदेशेन रत्नतुल्यान् शिष्यान्निर्मान्तीत्यन्योऽर्थः।

ग्रन्थेऽस्मिन् दृष्टान्तेन साकम् उपदेशा निर्दिष्टाः। अन्तः=निश्चयः, दृष्टोऽन्तो यस्मिन् स दृष्टान्त इत्यनया व्युत्पत्त्या दृष्टान्तशब्देनोदाहरणम् उच्यते।

उदाहरणपूर्वकोपदेशेन प्रतिपाद्यस्यार्थस्य दृढता भवति लोकानां मनसि। तेन च सन्मार्गप्रवृत्तौ जीवः सदा यतत इति ग्रन्थकर्तुराशयः।

विशेषता —

अस्मिन् ग्रन्थ एकां गाथां विहाय सर्वा अपि गाथा आर्याछन्दस्येव निबद्धा वर्तन्ते। एका गाथा[१] इन्द्रवज्रेत्यस्मिन् वृत्ते सुशोभते। तथा च जिनपूजाया माहात्म्यम्, जिनभक्तिः, दानम्, आचरणम्, सम्यक्त्वसेवनम्, उत्तमसङ्गः, गुरूपदेशः, क्रोधत्यागः, तीर्थरक्षणम्, जीवदयेत्यादयोऽशीतिरुपदेशा अत्र प्रकीर्तिताः।

कर्तृपरिचयः —

ग्रन्थस्यास्य कर्ता पण्डितश्रीयशोविजयगणी इति हस्तलिखितस्य पुष्पिकया ज्ञायते। पण्डितश्रीयशोविजयगणी तपागच्छीयोपाध्यायश्रीराज-विमलगणिनां शिष्य आसीत्। ग्रन्थकर्तुरुल्लेखः कस्मिन्नपीतिहासग्रन्थे नोपलभ्यते किन्तु तेषां गुरूणां विषये यदुपलभ्यते तत् किञ्चित् प्रस्तूयते। श्रीराजविमलगणी तपागच्छस्योपाध्याय आसीत्। आचार्यविजयदानसूरिः विक्रमस्य १६२८तमे वर्षे वरकाणाग्रामस्थपार्श्वनाथजिनालये पण्डितधर्मसागरहीरहर्षाभ्यां सह पण्डितराजविमलगणिने उपाध्यायपदवीम् अदात्।[२] प्रस्तुतग्रन्थकर्तुर्महोपाध्यायराज

---

१ गाथा३।

२ १) **विबुधावथ राजपूर्वको विमलो धर्मयुतश्च सागरः।**
सचिवाविव वाचकेश्वरौ कृतवान् सूरिमहीपुरन्दरः॥६.७७॥
अथ पुनः सूरिमहीपुरन्दरो विजयदानसूरिराजः विबुधौ पण्डितपदधारिणौ प्रज्ञांशावित्यर्थः। एको राज इदं पदं पूर्वं यस्य स राजपूर्वकः तादृशो विमलः च पुनः धर्म इति नाम्ना युतः सहितः सागरः एतावता राजविमलधर्मसागरनामानौ विबुधौ वाचकेश्वरौ उपाध्यायमुख्यौ कृतवान्। काविव। सचिवाविव। यथा महीमहेन्द्रः कौचिद्योग्यौ प्रधानौ विदधाति॥ (हीरसौभाग्य.६.७७), जैन परंपरानो इतिहास भाग-२, पृष्ठ-५४३।

२) उपाध्यायश्रीधर्मसागरगणिराजविमलगणिभ्यां सह न्यायशास्त्रम् अध्येतुं दक्षिणदिशि देवगिरिं (दौलताबाद) प्रैषयत्। इति जैनपरम्परेतिहासे दृश्यते किन्तु हीरसौभाग्ये श्रीराजविमलगणिनाम् उल्लेखो न दृश्यते। तथा च तद्ग्रन्थः -
अथ देवगिरावगम्यताखिलतर्कजिगांसयामुना।
पटलेन पयोमुचां यथा सलिलादानसमीहयाम्बुधौ॥
पठता सह धर्मसागरव्रतिना देवगिरौ गुरुर्व्यभात्।
सहकार इव प्रफुल्लता नवराजादनशाखिना वने॥ (हीरसौभाग्य.६.४८,४९)

विमलगणिशिष्यस्य पण्डितश्रीयशोविजयगणिनो विषये कुत्राप्युल्लेखो नोपलभ्यते।

सम्पादनस्य प्रयोजनम् —

१) **जिनरत्नकोशा**दिप्रमुखसूचिपत्रसङ्ग्रहेऽपि ग्रन्थस्यास्य सूचना न प्राप्यत इत्यत एतावत् पर्यन्तम् अप्रकाशितेयं कृतिरिति प्रतीयते।

२) ग्रन्थेऽस्मिन् दृष्टान्तपुरस्सरम् उपदेशाः गाथाद्वारेणप्रोक्ताः। दृष्टान्तमाध्यमेन सामान्यजना अपि भक्तिश्रद्धाविषयकं ज्ञानं यथा प्राप्नुयुः तद्वदाचरणम् अपि कुर्युरिति ग्रन्थोऽयम् सम्पाद्यते।

हस्तलिखितस्य बाह्यपरिचयः —

मुम्बापुरीस्थात् श्रीमोहनलालजीजैनकेन्द्रीयग्रन्थालयतः **(मोहनलालजी जैन सेंट्रल लायब्रेरी, मुंबई) (क्रमाङ्कः-**०४०८) अस्य हस्तलिखितस्य

---

३) विषयेऽस्मिन् मुनिजिनविजया आत्मानन्दप्रकाशमासिके किञ्चिद् उल्लिलिखुः। गच्छनायकाः श्रीविजयदानसूरयो नाडलाईग्रामे विराजिता आसन्। तैः पंन्यासधर्मसागरहीरहर्षाभ्यां सह पंन्यासराजविमलगणी आहूयत सङ्घेन च सह मङ्गलवाद्यवृन्दैः भगवतो वृषभदेवस्य मन्दिरे प्रावेश्यत। तत्र पुष्यनक्षत्रस्यामृतसिद्धियोग एभ्यः त्रिभ्योऽप्युपाध्यायपदवीम् अदीयत। अन्यदा बहवः साधवः सङ्घः च सम्मील्याचार्यस्थापनाविषये गच्छनायकं विज्ञपयन्ति किन्त्वन्ये साधवो नेच्छन्ति। गच्छनायकः स्वस्य पीठे पूर्वं गच्छनायकरूपेणाचार्यविजयराज सूरिम् अस्थापयद् अन्यम् आचार्यं नातिष्ठापयिषत्। आचार्यपद उपाध्यायराजविमलगणी एव स्थापनीय इति तेषां भावनासीत्। उपाध्यायश्रीधर्मसागरगणी उपाध्यायश्रीराजविमलगणिनम् उपेक्ष्योपाध्यायहीरहर्षगणिभ्य आचार्यपदवीं दापयितुम् ऐच्छत्। गच्छनायकः चातुर्मास्यां सूरिमन्त्रस्य जपम् ध्यानं चाकरोत्। अधिष्ठातृदेवो गच्छनायकं यद् अकथयत् तत् तथ्यं मनसि न्यधात्। अन्येद्युः गच्छनायकः चातुर्मास्यां सर्वान् साधून् आह्वयत् सर्वानुमतेन च निरणयत्। अधिष्ठातृदेवतासङ्केतानुसारेणोपाध्यायश्रीहीरहर्षगणिभ्य विक्रमसंवत् १६१०तमे वर्ष आचार्यपदवीम् अयच्छत्। पदव्यनन्तरं ते आचार्यविजयहीरसूरिरिति नाम्ना ख्यातिं जगुः। उपाध्यायश्रीराजविमलगणिधर्मसागरगणिभ्यां महोपाध्यायपदवीं दत्वा पञ्चाङ्गीसहितान् पञ्चचत्वारिंशद् आगमान्(६३६०००श्लोकप्रमाणाः)आर्पयत्।सम्भाव्यते यद् उपाध्यायपदव्यां महोपाध्यायपदव्यां वोपाध्यायराजविमलगणिन उपाध्यायविमलहर्षगणीति नाम व्यधात्। तदा सकलोऽपि सङ्घोऽहृष्यत्।(जैन परंपरानो इतिहास भाग-३, पृष्ठ-३४०-३४२।) आचार्यविजयहीरसूरिरुपाध्यायविमलहर्षगणिभ्यो महोपाध्यायपदवीम् अयच्छत् मुनिपद्मविजयलब्धिसागरप्रभृतिभ्यः षण्मुनिभ्यः च पण्डितपदवीम् आर्पयत्।(जैन परंपरानो इतिहास भाग-४, पृष्ठ-३५४।)

मृदुप्रति(softcopy)रुपालभत्। तस्माद् एव हस्तलिखितस्याकारादिविषयकविवरणम् अत्र प्रस्तोतुं न शक्यते। षट्पत्रात्मकेऽस्मिन् हस्तलिखिते प्रतिपृष्ठं नवपङ्क्तयः प्रतिपङ्क्ति चतुश्चत्वारिंशद् अक्षराणि च वर्तन्ते। ग्रन्थः कर्गजोपरि प्राचीनदेवनागरीलिप्यां लिखितः। कानिचनाक्षराण्यस्पष्टानि दृश्यन्ते तद्विहाय हस्तलिखितम् उत्तमम् एव वर्तते।

हस्तलिखितस्यान्तरिकपरिचयः —

हस्तलिखितेऽस्मिन् ग्रन्थस्यान्ते **महोपाध्यायश्रीराजविमलगणिशिष्यपं. जसविजयगणिकृतः**[१] इति गुरुणा सह ग्रन्थकर्तुर्नाम लभ्यते। अस्य ग्रन्थस्य प्रयोजनम् अपि ग्रन्थकृता निर्दिष्टं वर्तते यथा **गणिप्रवरश्रीभीमर्षिवाचनार्थः**[२] इति। प्रशस्ती रचनासमयो वा नोपलभ्यते। ग्रन्थस्यादौ मङ्गलसूचकचिह्नेन सह **ऐं नमः** इत्यादिमङ्गलं दृश्यते। गाथायाः प्रत्येकस्मिन् पादेऽपि दण्डो वर्तते तथैव प्रत्येकस्यां गाथायाम् अप्यन्ते सङ्ख्यायाः क्रमो विद्यते। हस्तलिखितेऽस्मिन् एकत्र लिपिकृता विस्मृतःपाठः पत्रस्य दक्षिणसमासे लिखितो वर्तते।

सम्पादनपद्धतिः—

ग्रन्थस्यास्य हस्तलिखितम् एकम् एवोपलभ्यते। समीक्षात्मकपाठसम्पादन-स्यानुलेखनीयान्तरसम्भावनासिद्धान्तानाम् उपयोगं कृत्वामुं ग्रन्थं शुद्धीकर्तुं प्रयासः कृतः। पाठसंशोधनेऽस्मिन् प्रयुक्ताः केचन नियमाः—

१) स्पष्टरूपेण यद् अक्षरं न प्रतीतं व्याकरणसम्बद्धा वा छन्दोविषयिका वाशुद्धिर्या दृष्टा तत्र मूलपाठं तथैव संस्थाप्य संशोधितपाठः वृत्ताकारकोष्ठके() संस्थापितः। यथा—**अम्हा(म्मा)**[३]।

२) स्खलितः सङ्केतितः त्रुटितो वा पाठः चतुरस्राकारकोष्ठके[] दर्शितः। यथा—**सिरिअज्जरक्खि[उ] व्व**[४] इति।

---

१ पत्रम् ६अ।

२ पत्रम्.६अ।

३ गाथा३३।

४ गाथा३३।

परिशिष्टानि—

प्रथमे परिशिष्टे उपदेशरत्नाकरे प्रस्तुतानाम् उपदेशविषयाणां सदृष्टान्ता सूचिरकारादिक्रमेण दत्ता।

द्वितीये परिशिष्टे उपदेशरत्नाकरे प्रस्तुतानां सविषया दृष्टान्तानां सूचिरकारादिक्रमेण दत्ता।

तृतीये परिशिष्टे उपदेशरत्नाकर आगतानां दृष्टान्तभिन्नानां विशेषनाम्नां सूचिरकारादिक्रमेण दत्ता।

चतुर्थे परिशिष्टे प्रस्तुतसम्पादनोपयुक्तानां सन्दर्भग्रन्थानां सूचिरकारादिक्रमेण दत्ता।

कृतज्ञता—

सम्पादनेऽस्मिन् पूज्यमुनिश्री**वैराग्यरतिविजय**गणिवर्याणाम्, **क्षीरसागरोपाह्वश्रीमतीविनया**वर्याणाम्, उपाध्येइत्युपाह्वानाम् **अमित**वर्याणां प्रेरणा मार्गदर्शनं साहाय्यं चावापि मयेति तान् कृतज्ञताम् आविष्करोमि। जिनरत्नकोशविभागे डोङ्गरे इत्युपाह्वै**र्मदन**वर्यैःतथा सूर्यवंशीत्युपाह्वैः **चिन्तामणि**वर्यैरन्यैः च हस्तलिखितोपलब्धिविषयेसाहाय्यम् आचरितम्। श्रुतभक्तिभरहृदयाभिः श्री**चन्दनबालाश्री**भिश्चान्तिमं शोधनमकारीति। एवमेव श्रुतभवनसंशोधनकेन्द्रे येऽन्ये कर्मरताः ते सर्वेऽपि सम्पादनकार्ये प्रत्यक्षरूपेण परोक्षरूपेण वा साहाय्यम् अकार्षुरतः तान् सर्वानपि धन्यवादपुरस्सरं कृतज्ञतां प्रकटयामि।

ग्रन्थेऽस्मिन् यथामति शुद्धं सम्पादितम् अथापि काचित् क्षतिर्यदि दृश्यते, तर्हि क्षन्तुम् अर्होऽयं बालः तथा चाशुद्धिप्रयोगं ज्ञापयितुम् अर्होऽप्येष इति सविनयं प्रार्थये।

भट्टोपाह्वो मञ्जुनाथः
श्रुतभवनसंशोधनकेन्द्रम्,
पुण्यपत्तनम्।
(१७-०९-२०१७)

पण्डितश्रीयशोविजयगणिकृतः

॥उपदेशरत्नाकरः॥

[संस्कृतच्छायया सहितः]

॥ऐँ नमः॥

[मूल] **सिरिगुरुपायपसाया, सरिऊण सरस्सइं च कविजणणिं।**
विविहोवएससययं, रएमि वेरग्गसुहजणयं॥१॥

[छाया] श्रीगुरुपादप्रसादात् स्मृत्वा सरस्वतीं च कविजननीम्।
विविधोपदेशशतकं रचयामि वैराग्यसुखजनकम्॥१॥

[मूल] **दायव्वं जीवेणं, सुपत्तदाणं सुहेसिणा निच्चं।**
जं घयदाणपहावा, जाओ इह पढमतित्थयरो॥२॥

[छाया] दातव्यं जीवेन सुपात्रदानं सुखैषिणा नित्यम्।
यद् घृतदानप्रभावाज्जात इह प्रथमतीर्थकरः॥२॥

[मूल] **नाणेण झाणेण तवेण दाणसीलेहिं किं संजमभावणेणं।**
जिणिंदपूआ अरिहंतठाणप्पया नराणं जह सेणिअस्स॥३॥[१]

[छाया] ज्ञानेन ध्यानेन तपसा दानशीलैः किं संयमभावनेन।
जिनेन्द्रपूजा अर्हत्स्थानप्रदा नराणां यथा श्रेणिकस्य॥३॥

[मूल] **साहूण संविभागं, किच्चा असणाइअस्स जो भुंजे।**
सो लहइ अयललच्छिं, भरहो जह चक्कवट्टित्तं॥४॥

[छाया] साधूनां संविभागं कृत्वा अशनादिकस्य यो भुङ्क्ते।
स लभते अचललक्ष्मीं भरतो यथा चक्रवर्तित्वम्॥४॥

[मूल] **वेआवच्चं निच्चं, कुज्जा समणाण सुद्धपरिणामो।**
जह बलिओ बाहुबली, भरहं जिच्चा गओ मुक्खं॥५॥

[छाया] वैयावृत्त्यं नित्यं कुर्यात् श्रमणानां शुद्धपरिणामः।
यथा बली बाहुबलिः भरतं जित्वा गतो मोक्षम्॥५॥

---

१ इन्द्रवज्रा- स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः। वृत्तरत्नाकरः ३.२८, पृ.१०७।

[मूल] असमत्था जइ मोहं, मुत्तुं तह कुणह निच्चमरिहंते।
जह तवसंजमरहिया, मरुदेवी निव्वुआ खिप्पं॥६॥

[छाया] असमर्था यदि मोहं मोक्तुं तथा कुरुत नित्यमर्हति।
यथा तपःसंयमरहिता मरुदेवी निर्वृता क्षिप्रम्॥६॥

[मूल] खणभंगुरं सरीरं, नच्चा जो संजमं पगिण्हेइ।
सो देवाण वि पुज्जो, सणंकुमारु व्व होइ सया॥७॥

[छाया] क्षणभङ्गुरं शरीरं ज्ञात्वा यः संयमं प्रगृह्णाति।
स देवानामपि पूज्यः सनत्कुमार इव भवति सदा॥७॥

[मूल] रोगाइएहिं नडिओ, जीवो जइ धम्मवासनारसिओ।
पावइ निव्वुइठाणं, जह नमिराउ व्व तक्कालं॥८॥

[छाया] रोगादिकैः नटितो जीवो यदि धर्मवासनारसितः।
प्राप्नोति निर्वृतिस्थानं यथा नमिराज इव तत्कालम्॥८॥

[मूल] तयासिअं च अप्पाणँ, तारेइ य वाहणु व्व धीमंतो।
जह पुंडरिओपण्णो, सुओ मए पंचकोडिजई॥९॥

[छाया] तदासीनं च आत्मानं तारयति च वाहनम् इव धीमान्।
यथा पुण्डरीकोत्पन्नः शुको मृतान् पञ्चकोटियतीन्॥९॥

[मूल] उवएसाउ[१] गुरूणं, दक्खा उवसंतविग्गहा हुंति।
उसहस्स सुआ अन्ने, जह निव्वाणं गया सिग्घं॥१०॥

[छाया] उपदेशाद् गुरूणां दक्षा उपशान्तविग्रहा भवन्ति।
वृषभस्य सुता अन्ये यथा निर्वाणं गताः शीघ्रम्॥१०॥

[मूल] करुणारसमग्गाणं, देयमदेयं नराण किं होइ।
मेहरहेणं पाणा, विहंगरक्खाकए कप्पा॥११॥

[छाया] करुणारसमार्गाणां देयमदेयं नराणां किं भवति।
मेघरथेन प्राणा विहङ्गरक्षाकृते कल्प्याः॥११॥

---

१ पत्रम् १ब

[मूल] समणो कया विआरं, न जाइ अवयारिमाणसम्मि जहा।
वग्घीविआरिओ वि हु, सुकोसलो सपियरो सुगइं॥१२॥

[छाया] श्रमणः कदा विकारं न याति अपकारिमानसे यथा।
व्याघ्रीविदारितोऽपि खलु सुकौशलः सपितः सुगतिम्॥१२॥

[मूल] समणं निवइं जं वा, कुज्जा मित्तं पसिद्धिकरणत्थं।
आसो सग्गं सुव्वयजिणेण जह पाविओ सुअणो॥१३॥

[छाया] श्रमणं नृपतिं यद्वा कुर्यान्मित्रं प्रसिद्धिकरणार्थम्।
अश्वः स्वर्गं सुव्रतजिनेन यथा प्रापितः सुजनः॥१३॥

[मूल] कोहं न सावराहे, कुणंति संसारवासउव्विग्गा।
जंतेहिं पीलिआ जह, खंदगसीसा गया मुक्खं॥१४॥

[छाया] क्रोधं न सापराधे कुर्वन्ति संसारवासोद्विग्नाः।
यन्त्रैः पीडिता यथा स्कन्दकशिष्या गता मोक्षम्॥१४॥

[मूल] सुलहं सग्गं मुक्खं, सम्मं सम्मत्तसेवणाओ वि।
भुंजइ कत्तिअसिट्ठी, संपइ जह तिअससामित्तं॥१५॥

[छाया] सुलभः स्वर्गः मोक्षः सम्यक् सम्यक्त्वसेवनादपि।
भुनक्ति कार्तिकश्रेष्ठी सम्प्रति यथा त्रिदशस्वामित्वम्॥१५॥

[मूल] जो सहइ बले संते, परस्स उक्कोसताडणाइसयं।
गयसुकुमालु व्व लहुं, स हणइ चिरसंचिअं कम्मं॥१६॥

[छाया] यः सहते बले सति परस्य उत्क्रोशताडनादिशतम्।
गजसुकुमार इव लघु स हन्ति चिरसञ्चितं कर्म॥१६॥

[मूल] सयपाणद्धंसे वि हु, परस्स पीडाकरं न साहंति।
वयणं तिविहेण कया, मेअज्जमुणि व्व मुणिवसहा॥१७॥

[छाया] स्वप्राणध्वंसेऽपि खलु परस्य पीडाकरं न साधयन्ति।
वचनं त्रिविधेन कदा मेतार्यमुनिरिव मुनिवृषभाः॥१७॥

[मूल] सीलं अणंतलीलं, संकडपडिआ चयंति नो धीरा।
इहपरलोए तेसिं, सुक्खं च सुदंसणु व्व सिया॥१८॥

[छाया] शीलमनन्तलीलं सङ्कटपतितास्त्यजन्ति नो धीराः।
इहपरलोके तेषां सौख्यं च सुदर्शन इव स्यात्॥१८॥

[मूल] थोवं पच्चक्खाणं, गुरुणो मूलम्मि भावओ विहिअं।
नो परिह[१]रंति सुक्खं, लहंति सिरिवंकचूलु व्व॥१९॥

[छाया] स्तोकं प्रत्याख्यानं गुरूणां मूले भावतो विहितम्।
न परिहरन्ति सौख्यं लभन्ते श्रीवङ्कचूल इव॥१९॥

[मूल] संघस्स रक्खणत्थं, कोवो विहिओ समुन्नइमुवेइ।
लद्धिसमिद्धो सासयं, ठाणं पत्तो जहा विण्हू॥२०॥

[छाया] सङ्घस्य रक्षणार्थं कोपो विहितः समुन्नतिमुपैति।
लब्धिसमृद्धः शाश्वतं स्थानं प्राप्तो यथा विष्णुः॥२०॥

[मूल] सग्गापवग्गकारणनवकारस्सावि समरणं लोए।
दमदंतरिसिहिं दिन्नो, पुलिंदमिहुणस्स सुहहेऊ॥२१॥

[छाया] स्वर्गापवर्गकारणनमस्कारस्यापि स्मरणं लोके।
दमदन्तर्षिभिर्दत्तः पुलिन्दमिथुनाय सुखहेतुः॥२१॥

[मूल] जिणधम्मपक्खवाओ, ललिअंगु व्व हवइ जयविजयकरो।
से भिच्चसज्जणस्स य, खयकारणमन्नहा होइ॥२२॥

[छाया] जिनधर्मपक्षपातः ललिताङ्ग इव भवति जयविजयकरः।
तस्य भृत्यसज्जनस्य च क्षयकारणमन्यथा भवति॥२२॥

[मूल] जिणभत्तिकरो जीओ, पावइ विम्हयकरं जसं इड्ढिं।
मणवंछिअत्थभोगा, रज्जं आरामसोहु व्व॥२३॥

[छाया] जिनभक्तिकरः जीवः प्राप्नोति विस्मयकरं यशः ऋद्धिम्।
मनोवाञ्छितार्थभोगान् राज्यं आरामशोभा इव॥२३॥

---

१ पत्रम् २अ

[मूल] जो एगजीवरक्खं, निच्चलचित्तो कुणेइ भावेण।
इहपरलोए लच्छिं, हरिबलमच्छि व्व सो लहइ॥२४॥

[छाया] य एकजीवरक्षां निश्चलचित्तः करोति भावेन।
इहपरलोके लक्ष्मीं हरिबलमत्स्यीव स लभते॥२४॥

[मूल] मोसं परिहरिअव्वं, दुग्गइमग्गस्स कारणं नच्चा।
सच्चं च जंपिअव्वं, वसुपव्वयनारओ व्व सया॥२५॥

[छाया] मृषा परिहर्तव्या दुर्गतिमार्गस्य कारणं ज्ञात्वा।
सत्यं च जल्पितव्यं वसुपर्वतनारक इव सदा॥२५॥

[मूल] परधणहरणं भवभयकरणं जे नायरंति वरलच्छी।
जणचित्तरंजणकरी, तेसिं चिअ सिद्धदत्तु व्व॥२६॥

[छाया] परधनहरणं भवभयकरणं ये नाचरन्ति वरलक्ष्मीः।
जनचित्तरञ्जनकरी तेषामेव सिद्धदत्त इव॥२६॥

[मूल] परमहिलं जणणिसमं, मन्नइ मणुओ मणेण काएण।
मणवंछिअसोक्खाइं, पावेइ कुलज्झउ व्व सया॥२७॥

[छाया] परमहिलां जननीसमां मन्यते मनुजो मनसा कायेन।
मनोवाञ्छितसौख्यानि प्राप्नोति कुलध्वज इव सदा॥२७॥

[मूल] अवियारिअकज्जं जो, करेइ अह कारवेइ अन्नेण।
जावज्जीवं सोअइ, अंबतरुत्थे य जयदेवो॥२८॥

[छाया] अविचारितकार्यं यः करोति अथ कारयति अन्येन।
यावज्जीवं शोचति आम्रतरुस्थे च जयदेवः॥२८॥

[मूल] जी[१]विअदाणुवयारिअमवि मच्चं हं(हिं)सइ कयग्घो जो।
सेणियघायगकोणी जह पच्चइ निरयजालाए॥२९॥

[छाया] जीवितदानोपकारितमपि मर्त्यं हिनस्ति कृतघ्नो यः।
श्रेणिकघातककोणिः यथा पच्यते नरकज्वालायाम्॥२९॥

---

१ पत्रम् २ ब

[मूल] इंदियविआरनडिआ, घोरं पावं करंति कामंधा।
सूरिअकंताइ जहा, पएसिराओ हओ जम्हा॥३०॥

[छाया] इन्द्रियविकारनटिता घोरं पापं कुर्वन्ति कामान्धाः।
सूर्यकान्तया यथा प्रदेशिराजा हतो यस्मात्॥३०॥

[मूल] अइलोहो कायव्वो, न कयावि सुहेसिणा मणुस्सेणं।
अइलोहेण विनडिआ, वेसा जह गद्दही आसी॥३१॥

[छाया] अतिलोभः कर्तव्यो न कदापि सुखैषिणा मनुष्येण।
अतिलोभेन विनटिता वेश्या यथा गर्दभी आसीत्॥३१॥

[मूल] संते वि जुवइसंगे, वालग्गं न चलिओ अ तारुण्णे।
सिरिथूलभद्द इव जो, भवोदहीगोपउ व्व भवे॥३२॥

[छाया] सत्यपि युवतिसङ्गे वालाग्रं न चलितश्च तारुण्ये।
श्रीस्थूलभद्र इव यो भवोदधिगोप इव भवेत्॥३२॥

[मूल] अम्हा(म्मा)पिउणो सुक्खं, जो कंखइ धम्मिणो अमिच्छत्ती।
स य परजणस्स तारू, हवेइ सिरिअज्जरक्खि[उ] व्व॥३३॥

[छाया] मातापित्रोः सौख्यं यः काङ्क्षति धर्मी अमिथ्यात्वी।
स च परजनस्य तारको भवति श्रीआर्यरक्षित इव॥३३॥

[मूल] विणयाओ सोहग्गं, विज्जाधणसंपया विवेयत्तं।
संपज्जइ सोहणमवि, विक्कमसूरु व्व इहलोए॥३४॥

[छाया] विनयात् सौभाग्यं विद्याधनसम्पद् विवेकत्वम्।
सम्पद्यते शोभनमपि विक्रमशूर इव इहलोके॥३४॥

[मूल] सव्वगुणछत्तसरिसो, जस्स मणेगो विवेगराओ त्थि।
दोसे पिहाय सयले, सुमईसूरु व्व उज्जयइ॥३५॥

[छाया] सर्वगुणच्छत्रसदृशो यस्य मनसि एको विवेकरागोऽस्ति।
दोषान् पिधाय सकलान् सुमतिशूर इव उद्योतते॥३५॥

[मूल] जो देइ भत्तिजुत्तो, दाणं साहूण पारणे पुण्णं।
लोअग्गं भोगड्ढिं, पावइ जह सालिभद्दु व्व॥३६॥

[छाया] यो ददाति भक्तियुक्तः दानं साधुभ्यः पारणे पुण्यम्।
लोकाग्रं भोगर्द्धिं प्राप्नोति यथा शालिभद्र इव॥३६॥

[मूल] पूआसक्कारविणयपमाणपडिपुच्छणाइकम्मपरो।
साहूण बद्धकम्मं, सिढिलेइ नरो जहा विण्हू॥३७॥

[छाया] पूजासत्कारविनयप्रमाणप्रतिपृच्छनादिकर्मपरः।
साधूनां बद्धकर्म शिथिलयति नरो यथा विष्णुः॥३७॥

[मूल] थेवो वा बहुओ वा, नियमो काऊण पालियव्वो सो।
अप्पो अणप्पलाहो, हवेइ जह[१] कमलसिट्ठि॥३८॥

[छाया] स्तोको वा बहुको वा नियमः कृत्वा पालयितव्यः सः।
अल्पोऽनल्पलाभो भवति यथा कमलश्रेष्ठी॥३८॥

[मूल] निरयं वा सुरलोयं, निव्वाणं अप्पणो समप्पेइ।
चित्तं निजंतणीयं, पसन्नचंदु व्व सुहजणयं॥३९॥

[छाया] नरकं वा सुरलोकं निर्वाणम् आत्मानं समर्पयति।
चित्तं निजन्तनीयं प्रसन्नचन्द्र इव सुखजनकम्॥३९॥

[मूल] विसयविरत्ता मणुआ, पावंति सुहं दुहं विसयसत्ता।
जिणपालो जिणरक्खो, नाओ जह मणुअलोगम्मि॥४०॥

[छाया] विषयविरक्ताः मनुजाः प्राप्नुवन्ति सुखं दुःखं विषयसक्ताः।
जिनपालो जिनरक्षो ज्ञातो यथा मनुजलोके॥४०॥

[मूल] लोहाउरा मणुस्सा, पुत्तं मित्तं च बंधवं जणणिं।
मारिंति जहा चउरो, सुवण्णपुरिसा गया निहणं॥४१॥

[छाया] लोभातुरा मनुष्याः पुत्रं मित्रं च बान्धवं जननीम्।
मारयन्ति यथा चत्वारः सुवर्णपुरुषा गता निधनम्॥४१॥

---

१ पत्रम् ३अ

[मूल] बहुविहमणिकणगदविणकन्नाइनिमंतिओ न लुद्धो जो।
सपरं तारइ साहू, सप्पुरिसो जह य वयररिसी॥४२॥

[छाया] बहुविधमणिकनकद्रविणकन्यादिनिमन्त्रितो न लुब्धो यः।
स्वपरं तारयति साधुः सत्पुरुषो यथा च वज्रर्षिः॥४२॥

[मूल] किं रूवेण कुलेण य, अपुव्वेणं नरस्स एग(गो) तवो।
जं कम्मक्खयहेऊ, हरिएसबलु व्व सुरपुज्जो॥४३॥

[छाया] किं रूपेण कुलेन च अपूर्वेण नरस्य एकं तपः।
यत् कर्मक्षयहेतुः हरिकेशबल इव सुरपूज्यः॥४३॥

[मूल] खेअरभूअरगाणं, जं बावत्तरिसहस्सजुवईणं।
सामित्तं वसुदेवो, पत्तो तं तवतरुस्स फलं॥४४॥

[छाया] खेचरभूचरकाणां यद् द्विसप्ततिसहस्रयुवतीनाम्।
स्वामित्वं वसुदेवः प्राप्तः तत् तपस्तरोः फलम्॥४४॥

[मूल] संतोसाउ नराणं, संपज्जइ इहभवम्मि बहुलच्छी।
लोउत्तरसोहग्गं, लहेइ सिरिरयणसारस्स॥४५॥

[छाया] सन्तोषात् नराणां सम्पद्यते इहभवे बहुलक्ष्मीः।
लोकोत्तरसौभाग्यं लभते श्रीरत्नसारस्य॥४५॥

[मूल] अन्नो वि मंततंतो, संकाए सिज्झए न कइआ वि।
गंधारु व्व सदोसं, ता सम्मत्तं कहं फलइ॥४६॥

[छाया] अन्योऽपि मन्त्रतन्त्रः शङ्कया सिद्ध्यति न कदापि।
गन्धार इव सदोषं तदा सम्यक्त्वं कथं फलति॥४६॥

[मूल] उत्तममहिलासंगं, कयन्ननिवसंगमं अलोहं च।
मित्तं जो कुणइ नरो, सीदइ न पहाकरु व्व सया॥४७॥

[छाया] उत्तममहिलासङ्गं कृतज्ञनृपसङ्गममलोभं च।
मित्रं यः करोति नरः सीदति न प्रभाकर इव सदा॥४७॥

[मूल] रक्खइ रक्खावइ जो, जीवे नियपाणअप्पणेण सयं।
चित्त[१]चमक्किययइड्ढिं, भीमकुमारु व्व सो लहइ॥४८॥

[छाया] रक्षति रक्षयति यो जीवान् निजप्राणार्पणेन स्वयम्।
चित्तचमत्कृतर्द्धिं भीमकुमार इव स लभते॥४८॥

[मूल] कठिणकिलेसकरो वा, होउ तवो हवउ माय(स)खवगु व्व।
कूरगडु व्व सकज्जं, उवसमजोगेण साहेइ॥४९॥

[छाया] कठिनक्लेशकरं वा भवतु तपो भवतु मासक्षपक इव।
कूरगडुरिव स्वकार्यम् उपशमयोगेन साधयति॥४९॥

[मूल] किं तवसंजमकिरिआसु असीलगुणेहिं जइ हवइ कोहो।
सम्मत्तचरणभेओ, मंडूकी(कि)द्धंसखवगु व्व॥५०॥

[छाया] किं तपःसंयमक्रियासु अशीलगुणैः यदि भवति क्रोधः।
सम्यक्त्वचरणभेदो मण्डूकीध्वंसक्षपक इव॥५०॥

[मूल] पत्तुवही पडिलेहणमायरमाणो कुणेइ कम्मखयं।
समभावं वट्टंतो, वक्कलचीरि व्व तक्काले॥५१॥

[छाया] पात्रोपधिः प्रतिलेखनमाचरन् करोति कर्मक्षयम्।
समभावे वर्तमानो वल्कलचीरिरिव तत्काले॥५१॥

[मूल] देवगुरुधम्मयाइसु, हीलइ मणुओ पसंसइ जो उ।
कठिणदुहमउलसुक्खं, दिट्ठंतो सोमभीमाणं॥५२॥

[छाया] देवगुरुधर्मादिषु हीलति मनुजः प्रशंसति यस्तु।
कठिनदुःखमतुलसौख्यं दृष्टान्तः सोमभीमयोः॥५२॥

[मूल] साहूणं जो दाणं, मिअममिअं देइ दावइ परं पि।
अगणिअविभूइसामी, चंदधवलधम्मदत्तु व्व॥५३॥

[छाया] साधुभ्यो यो दानं मितममितं ददाति दापयति परमपि।
अगणितविभूतिस्वामी चन्द्रधवलधर्मदत्ताविव॥५३॥

---

१ पत्रम् ३ब

[मूल]　सीलेण हवइ धणिअं, दुहमवि सुक्खं विजोगिसंजोगो।
दारिद्दे चिअ रज्जं, सुंदरराउ व्व इहलोए॥५४॥

[छाया] शीलेन भवति अत्यन्तं दुःखमपि सौख्यं वियोगिसंयोगः।
दारिद्र्ये एव राज्यं सुन्दरराज इव इहलोके॥५४॥

[मूल]　विहिए तवम्मि चोरिअकम्मं न विवेइअं विणा जाइ।
चरिअं महाबलस्स वि, सुच्चा तेअं न कायव्वं॥५५॥

[छाया] विहिते तपसि चौर्यकर्म न विवेकं विना याति।
चरितं महाबलस्यापि श्रुत्वा स्तेयं न कर्तव्यम्॥५५॥

[मूल]　जुवइं अणत्थमूलं, चंचलचित्तं निरयदुवारभूअं।
नच्चा तासिं संगं, चइअव्वं कट्ठसिट्ठि व्व॥५६॥

[छाया] युवतिं अनर्थमूलां चञ्चलचित्तां नरकद्वारभूताम्।
ज्ञात्वा तासां सङ्गः त्यक्तव्यः काष्ठश्रेष्ठीव॥५६॥

[मूल]　जो निअइंदियगामं, अकित्तिवहबंधदुग्गइनिआणं।
जयइ इहपरलोए, विजयं पावेइ विजउ व्व॥५७॥[1]

[छाया] यो निजेन्द्रियग्रामम् अकीर्तिवधबन्धदुर्गतिनिदानम्।
जयति इहपरलोकयोः विजयं प्राप्नोति विजय इव॥५७॥

[मूल]　विणयबहुमाणपुव्वं, सिरिगुरुमूले पढंति जे विज्जं।
सहला सुग्ग[2]इहेऊ, तेसिं इह सेणिउ व्व भवे॥५८॥

[छाया] विनयबहुमानपूर्वं श्रीगुरुमूले पठन्ति ये विद्याम्।
सफलाः सुगतिहेतवस्तेषामिह श्रेणिक इव भवे॥५८॥

[मूल]　चउविहबुद्धिनिहाणा, भुवणपहाणा अपुव्वधारिट्ठा।
धम्ममिसेण छलंति अ, अभयकुमारु व्व वेसाए॥५९॥

[छाया] चतुर्विधबुद्धिनिधाना भुवनप्रधाना अपूर्वधार्ष्ट्याः।
धर्ममिषेण छल्यन्ते चाभयकुमार इव वेश्यया॥५९॥

१　एका गाथा विस्मृता गाथाङ्को वा विस्मृत इत्याभाति।

२　पत्रम् ४अ

[मूल] चिंतिअमत्थं कसिणं, साहइ वेगेण सुमिणदुल्लंभं।
पुण्णधरो सिरिविक्कमसूरु व्व दयाइसत्तजुओ॥६०॥

[छाया] चिन्तितमर्थं कृत्स्नं साधयति वेगेन स्वप्नदुर्लभम्।
पुण्यधरः श्रीविक्रमशूर इव दयादिसत्त्वयुतः॥६०॥

[मूल] कुम्मापुत्तसमाणो, को अन्नो मायतायपयभत्तो।
नाणधरो गिहवासे, ठिओ चिरं तयणुकंपाए॥६१॥

[छाया] कुर्मापुत्रसमानः कोऽन्यः मातृतातपदभक्तः।
ज्ञानधरो गृहवासे स्थितः चिरं तदनुकम्पया॥६१॥

[मूल] भावेण सुद्धचित्तो, जइ वि अकज्जं कुणेइ कम्मवसा।
तह से न कम्मबंधो, नाणं आसाढभूइस्स॥६२॥

[छाया] भावेन शुद्धचित्तो यद्यप्यकार्यं करोति कर्मवशात्।
तथा तस्य न कर्मबन्धो ज्ञातमाषाढभूतेः॥६२॥

[मूल] केण वि समं विरोहं, धीमंतो कुणइ नेव कप्पंते।
सुअराएणं वेसा, विडंबिआ मुद्धमुंडेणं॥६३॥

[छाया] केनापि समं विरोधं धीमान् करोति नैव कल्पान्ते।
शुकरागेण वेश्या विडम्बिता मुग्धमुण्डेन॥६३॥

[मूल] अइपावभारभरिओ, जीवो संसारवासउव्विग्गो।
घोरतवेण इहभवे, सुज्झइ लहु(हुं) सहसमल्लु व्व॥६४॥

[छाया] अतिपापभारभृतः जीवः संसारवासोद्विग्नः।
घोरतपसा इहभवे शुध्यति लघु सहस्रमल्ल इव॥६४॥

[मूल] अइनिविडसंकडोदहिपडिआ जिणधम्मवाहणे लीणा।
जीवा लहंति पारं, महिलाउव्विग्गघिट्ठ[1]व्व॥६५॥

[छाया] अतिनिबिडसङ्कटोदधिपतिता जिनधर्मवाहने लीनाः।
जीवा लभन्ते पारं महिलोद्विग्नकुब्ज इव॥६५॥

---

१ =कुब्जा दे.(पा.स.म. ३०७)

[मूल] समिआ गुत्ता समणा, परस्स पीडाकरं न साहंति।
वयणं कलंकपत्ते, मुणिवइणो अत्थ दिट्ठंतो॥६६॥

[छाया] समिता गुप्ताः श्रमणाः परस्य पीडाकरं न साधयन्ति।
वचनं कलङ्कप्राप्ते मुनिपतेरत्र दृष्टान्तः॥६६॥

[मूल] भविअव्वं भवएवं(व), उज्जमकहणाइएहिं किं होइ।
जह जम्मेयरराया, जन्नकए वारिओ वि कओ॥६७॥

[छाया] भवितव्यं भवत्येव उद्यमकथनादिकैः किं भवति।
यथा जनमेजयराजा यज्ञकृते वारितोऽपि कृतः॥६७॥

[मूल] किं दुक्करेण तवसा, सरीरपीडाकरेण जीवाणं।
जइ णो विसुद्धजयणा, विहलं ता[१] होउ सुसढु व्व॥६८॥

[छाया] किं दुष्करेण तपसा शरीरपीडाकरेण जीवानाम्।
यदि न विशुद्धयतना विफलं तदा भवतु सुषढ इव॥६८॥

[मूल] भावेण विणा गहिअं, चारित्तं देइ बहुफलं सिग्घं।
एगदिणगहिअचरणो, संपइराउ व्व पुव्वभवे॥६९॥

[छाया] भावेन विना गृहीतं चारित्रं ददाति बहुफलं शीघ्रम्।
एकदिनगृहीतचरणः सम्प्रतिराजा इव पूर्वभवे॥६९॥

[मूल] बहुणा उवएसेणं, केइ न बुज्झंति बंभदत्तु व्व।
थेवेण वि लहुल(क)म्मा, नलवम्मनिवु व्व संसारे॥७०॥

[छाया] बहुना उपदेशेन केचित् न बुद्ध्यन्ति ब्रह्मदत्त इव।
स्तोकेनापि लघुकर्माणो नलवर्मनृप इव संसारे॥७०॥

[मूल] जिअलोहं दट्ठूणं, लोहविनडिआ चयंति नियलोहं।
सप्पुरि[सा] सच्छयरा, जंबूं(बुं) दट्ठूण पवहमुहा॥७१॥

[छाया] जितलोभं दृष्ट्वा लोभविनटिताः त्यजन्ति निजलोभम्।
सत्पुरुषाः स्वच्छतरा जम्बूं दृष्ट्वा प्रभवमुखाः॥७१॥

---

१ पत्रम् ४ब

[मूल] थोवं जो जिणदव्वं, र(भ)क्खियरभसेण अप्पए पच्छा।
सो दुहमउलं भुच्चा, लच्छीपुंजु व्व लहइ सुहं॥७२॥

[छाया] स्तोकं यो जिनद्रव्यं भक्षयित्वा रभसा अर्पयति पश्चात्।
स दुःखमतुलं भुक्त्वा लक्ष्मीपुञ्ज इव लभते सुखम्॥७२॥

[मूल] साहारणजिणदव्वं, विणासए जो जणो य मूढमणो।
सो निरए गंतूणं, सागरसिट्ठि व्व सहइ दुहं॥७३॥

[छाया] साधारणजिनद्रव्यं विनाशयति यो जनश्च मूढमनः।
स नरके गत्वा सागरश्रेष्ठी इव सहते दुःखम्॥७३॥

[मूल] जिणहरजिण्णुद्धरणं, कुणेइ जो तित्थरक्खणट्ठाए।
नियपरतार[ण]हेऊ, गिरिनारे सज्जणु व्व सया॥७४॥

[छाया] जिनगृहजीर्णोद्धरणं करोति यः तीर्थरक्षणार्थाय।
निजपरतारणहेतुः गिरिनारे सज्जन इव सदा॥७४॥

[मूल] तायपडिवन्नमत्थं, जे पुत्ता निव्वहंति ते पुत्ता।
सत्तुंजयउद्धारं, वायभडोऽकारि उद्धारं॥७५॥

[छाया] तातप्रतिपन्नमर्थं ये पुत्रा निर्वहन्ति ते पुत्राः।
शत्रुञ्जयोद्धारं वाग्भटोऽकरोत् उद्धारम्॥७५॥

[मूल] ते धन्ना कयपुण्णा, जे जिणभवणं कुणंति भत्तीए।
ते देवाण वि पुज्जा, अब्बुदचेइअकरो विमलो॥७६॥

[छाया] ते धन्याः कृतपुण्या ये जिनभवनं कुर्वन्ति भक्त्या।
ते देवानामपि पूज्या अर्बुदचैत्यकरो विमलः॥७६॥

[मूल] जिणवरपूआ थोवा, नराण चिंतामणि व्व सुहजणणी।
संसारजलहितरणी, कुमारपालस्स जह आसी॥७७॥

[छाया] जिनवरपूजा स्तोका नराणां चिन्तामणिरिव सुखजननी।
संसारजलधितरणिः कुमारपालस्य यथा आसीत्॥७७॥

[मूल] सयलगुणाणं मूलं, सत्तं जेसिं मणे समुल्लसइ।
इहपरलोइयसिद्धिं, होइ अजापुत्त इव खिप्पं॥७८॥

[छाया] सकलगुणानां मूलं सत्त्वं येषां मनसि समुल्लसति।
इहपारलौकिकसिद्धिर्भवति अजापुत्र इव क्षिप्रम्॥७८॥

[मूल] अबला संकड[१]पडिआ, सीलं रक्खेइ निम्मलं महिला।
बुद्धीए जगपुज्जा, महासई जह य सी{सी}लवई॥७९॥

[छाया] अबला सङ्कटपतिता शीलं रक्षति निर्मलं महिला।
बुद्ध्या जगत्पूज्या महासती यथा च शीलवती॥७९॥

[मूल] थोवं पच्चक्खाणं, किच्चा जे निव्वहंति जाजीवं।
मणवंछिअत्थभोगे, लहंति जे(ते) रूवसेणु व्व॥८०॥

[छाया] स्तोकं प्रत्याख्यानं कृत्वा ये निर्वहन्ति यावज्जीवम्।
मनोवाञ्छितार्थभोगान् लभन्ते ते रूपसेन इव॥८०॥

[मूल] सत्तीए जं कज्जं, सी(सि)ज्झइ न कया तयंसबुद्धीए।
हेलाए कठिणं चिअ, दिट्ठंतो धणवइस्स सुओ॥८१॥

[छाया] शक्त्या यत् कार्यं सिद्ध्यति न कदा तदंशबुद्ध्या।
हेलया कठिनमेव दृष्टान्तो धनपतेः सुतः॥८१॥

[मूल] सव्वमणिच्चं लोए, दट्ठूणं इंदजालसारिच्छं।
बुज्झंति पासमाणा, धन्ना पत्तेयबुद्धमुणी॥८२॥

[छाया] सर्वमनित्यं लोके दृष्ट्वा इन्द्रजालसदृशम्।
बुद्ध्यन्ति पश्यन्तो धन्याः प्रत्येकबुद्धमुनयः॥८२॥

[मूल] कूडकवडेण महिला, सुद्धं पुरिसं छलंति निस्संकं।
दुस्सीला सीलवई, गयनिद्दसुवण्णकारु व्व॥८३॥

[छाया] कूटकपटेन महिलाः शुद्धं पुरुषं छलयन्ति निःशङ्कम्।
दुःशीला शीलवती गतनिद्रसुवर्णकार इव॥८३॥

---

१ पत्रम्५अ

[मूल] जिणधम्मभाविअप्पा, घाइयकम्मं खवंति निम्मूलं।
मंगलमाला तेसिं, मंगलक[ल]सु व्व सुअभणिअं॥८४॥

[छाया] जिनधर्मभावितात्मा घातिकर्म क्षपयन्ति निर्मूलम्।
मङ्गलमाला तेषां मङ्गलकलश इव श्रुतभणितम्॥८४॥

[मूल] आणाए जीवदयं, कुणंति कारुण्णमाणसा मणुआ।
ते दुहपडिआ सुक्खं, लहंति सिरिवच्छराउ व्व॥८५॥

[छाया] आज्ञया जीवदयां कुर्वन्ति कारुण्यमानसा मनुजाः।
ते दुःखपतिताः सौख्यं लभन्ते श्रीवत्सराज इव॥८५॥

[मूल] साहूण पारणे जो, सुमित्त इव देइ भावओ दाणं।
वीसचमक्किअलच्छिं, भुच्चा सो लहइ परमपयं॥८६॥

[छाया] साधूनां पारणे यः सुमित्र इव ददाति भावतो दानम्।
विश्वचमत्कृतलक्ष्मीं भुक्त्वा स लभते परमपदम्॥८६॥

[मूल] तुच्छाउअम्मि धम्मियनराण किं गेहमंडणाईहिं।
दट्ठूं(ट्ठुं) लोमसमिंदो, निव्विन्नो सग्गनिम्माणे॥८७॥

[छाया] तुच्छायुष्के धार्मिकनराणां किं गृहमण्डनादिभिः।
दृष्ट्वा लोमसमिन्द्रो निर्विण्णः स्वर्गनिर्माणे॥८७॥

[मूल] गाहा इक्का वि सुआ, सुहगुरुमूलम्मि कज्जसुहकरणी।
मिच्छत्ततिमिरहरणी, सिव[१]दानह(रिहा) रोहचोरु व्व॥८८॥

[छाया] गाथा एकापि श्रुता शुभगुरुमूले कार्यसुखकारिणी।
मिथ्यात्वतिमिरहारिणी शिवदानार्हा रोहचौर इव॥८८॥

[मूल] सवणाओ कल्लाणं, पावं सग्गं सिवं च जाणंति।
अइपावभारभरिआ, अज्जुणमालि व्व सुज्झंति॥८९॥

[छाया] श्रवणात् कल्याणं पापं स्वर्गं शिवं च जानन्ति।
अतिपापभारभृतः अर्जुनमालीव शुद्ध्यन्ति॥८९॥

---

१ पत्रम् ५ब

[मूल] सयला मणोरहा चिअ, सहला माऊण हुंति पुत्तेण।
सीलायारगुणेणं, य पज्जुन्नकुमारमाओ व्व॥९०॥

[छाया] सकला मनोरथा एव सफला मातृणां भवन्ति पुत्रेण।
शीलाचारगुणेन च प्रद्युम्नकुमारमातेव॥९०॥

[मूल] बहुपुण्णजोगि सयलं, चिंतिअकज्जं फलेइ पुरिसस्स।
कप्पतरु व्व सअत्थं, नवरं विज्जाविलासु व्व॥९१॥

[छाया] बहुपुण्ययोगि सकलं चिन्तितकार्यं फलति पुरुषस्य।
कल्पतरुरिव सार्थं नवरं विद्याविलास इव॥९१॥

[मूल] धम्मधुरीणं मित्तं, कुणमाणो लहइ सारसम्मत्तं।
हासप्पहाससामी, विबोहिओ पुव्वमित्तेणं॥९२॥

[छाया] धर्मधुरीणं मित्रं कुर्वन् लभते सारसम्यक्त्वम्।
हासाप्रहासास्वामी विबोधितः पूर्वमित्रेण॥९२॥

[मूल] जह संगो तह रंगो, होइ(ई) जीवस्स फ(प्फ)लिहतुल्लस्स।
तम्हा उत्तमसंगो, दट्ठुं सेअणगसुअजुअलं॥९३॥

[छाया] यथा सङ्गः तथा रङ्गो भवति जीवस्य स्फटिकतुल्यस्य।
तस्माद् उत्तमसङ्गो दृष्ट्वा सेचनकसुतयुगलम्॥९३॥

[मूल] विउलद्धिं मणचिंतिअसिद्धिं निवमाणपूअणं लहइ।
निअबुद्धीए जीवो, रोहगपमुहु व्व अणुदियहं॥९४॥

[छाया] विपुलर्द्धिं मनश्चिन्तितसिद्धिं नृपमानपूजनं लभते।
निजबुद्ध्या जीवो रोहकप्रमुख इवानुदिवसम्॥९४॥

[मूल] परकिअपावं सयलं, निंदाए भुंजए सयं जीवो।
नासइ सुकयं पुव्वं, वुड्ढामहिलाइ दिट्ठंतो॥९५॥

[छाया] परकृतपापं सकलं निन्दया भुङ्क्ते स्वयं जीवः।
नाशयति सुकृतं पूर्वं वृद्धमहिलाया दृष्टान्तः॥९५॥

[मूल] संपत्ती तह कित्ती, अणुवमरूवं गुणाण माहप्पं।
सीलेण हवइ धणिअं, गजसिंहकुमारदिट्ठंतो॥९६॥

[छाया] सम्पत्तिः तथा कीर्तिरनुपमरूपं गुणानां माहात्म्यम्।
शीलेन भवति अत्यन्तं गजसिंहकुमारदृष्टान्तः॥९६॥

[मूल] पव्वतिहिं जो पालइ, अवज्जकज्जाण वज्जणाउ सया।
सो साहेइ सिरिरयणसेहरराउ व्व मुत्तिसुहं॥९७॥

[छाया] पर्वतिथिं यः पालयत्यवद्यकार्याणां वर्जनात् सदा।
स साधयति श्रीरत्नशेखरराज इव मुक्तिसुखम्॥९७॥

[मूल] छत्तीसगुणसमेओ, सुद्धपरूवी जिणिंद इव सूरी।
तारइ तरेइ सपरं, ससि(सिरि)गणिआणंदविमलु व्व॥९८॥

[छाया] षट्त्रिंशद्गुणसमेतः शुद्धप्ररूपी जिनेन्द्र इव सूरिः।
तारयति तरति स्वपरं श्रीगणि-आनन्दविमल इव॥९८॥

[मूल] पडिरूवाइगुरुगुणवेरग्गजुओ धरेइ गणभारं।
तित्थयरसमो विहवइ, सूरी सिरिविजयदाणु व्व॥९९॥

[छाया] प्रतिरूपादिगुरुगुणवैराग्ययुतः धारयति गणभारम्।
तीर्थकरसमो विभवति सूरिः श्रीविजयदान इव॥९९॥

[मूल] सुत्तत्थरयणभरिओ, दुवालसं[गं] पढेइ पाढयति।
तवगच्छे सो सोहइ, उज्झाओ रायविमलु व्व॥१००॥

[छाया] सूत्रार्थरत्नभृतो द्वादशाङ्गं पठति पाठयति।
तपागच्छे स शोभते उपाध्यायो राजविमल इव॥१००॥

[मूल] सिरिहीरविजयसूरिप्पसायओ रायविमलसीसेणं।
जसविजएणं कविणोवएसरयणायरो विहिओ॥१०१॥

[छाया] श्रीहीरविजयसूरिप्रसादतो राजविमलशिष्येण।
यशोविजयेन कविनोपदेशरत्नाकरो विहितः॥१०१॥

[मूल] जा चंदसूरजलही, पुहुवीए चिट्ठए थिरं ताव।
बहुजणविलोयमाणो, उवएसरयणायरो जयउ॥१०२॥

[छाया] यावत् चन्द्रसूर्यजलधयः पृथिव्यां तिष्ठन्ति स्थिरं तावत्।
बहुजनविलोक्यमान उपदेशरत्नाकरो जयतु॥१०२॥

॥इति श्रीउपदेशरत्नाकरग्रन्थः समाप्तः॥

गणिप्रवरश्रीभीमर्षिवाचनार्थं

महोपाध्यायश्री५श्रीराजविमलगणिशिष्य-

पं.जसविजयगणिकृतः॥

पण्डितश्रीयशोविजयगणिकृतः

॥उपदेशरत्नाकरः॥

राष्ट्रभाषासारानुवादः

श्रीगुरुचरणों के अनुग्रह से और कवियों की जननी सरस्वती माता का स्मरण करके वैराग्यरूपी सुख को उत्पन्न करनेवाले विविध सौ उपदेशवाले ग्रन्थ की रचना करता हूँ। (१)

सुख की इच्छा करनेवाले जीवों ने सर्वदा योग्य व्यक्ति को दान देना चाहिए। जैसे घी के दान के प्रभाव से पहले तीर्थंकर हुए। (२)

ज्ञान से, ध्यान से, तप से, दान से, शील से और संयमभाव से जिनेंद्र की पूजा करने से मनुष्यों को श्रेणिकराजा की तरह अर्हत्स्थान प्राप्त होता है। (३)

जो साधुओं को दान करके भोजन करता है वह भरत की तरह चक्रवर्तिपद और स्थिर लक्ष्मी को प्राप्त करता है। (४)

शुद्धपरिणामपूर्वक श्रमणों की नित्य सेवा करनी चाहिए। जैसे बलवान् बाहुबलि भरत को जीतकर मोक्ष में गये। (५)

यदि मोह का त्याग करने में असमर्थ हो तो नित्य अर्हद्भक्ति करो जैसे तप और संयम से रहित मरुदेवी अर्हद्भक्ति से शीघ्र मोक्ष में गयी। (६)

शरीर को क्षणभंगुर जानकर जो संयम ग्रहण करता है, वह सर्वदा सनत्कुमार की तरह देवों के भी पूज्य बनता है। (७)

रोगादि से पीडित जीव यदि धर्म में आसक्त है, वह नमिराजा की तरह शीघ्र मोक्षस्थान को प्राप्त करता है। (८)

बुद्धिमान् पुरुष जहाज की तरह स्व और पर को तारता है जैसे पुंडरीकगिरि में उत्पन्न तोते ने स्वयं को और मरे हुए पांच करोड साधुओं को तारा। (९)

गुरुओं के उपदेश से चतुर पुरुष के झगडे शांत होते है जैसे वृषभदेव के अन्य सभी पूत्र गुरु के उपदेश से शीघ्र निर्वाण को प्राप्त हुए। (१०)

करुणारस से युक्त मनुष्यों के लिए देय और अदेय क्या होता है? एक पंछी की

रक्षा के लिए मेघरथ ने प्राणों का त्याग किया। (११)

अपकारक विचार होने पर भी साधु कभी भी विकार को प्राप्त नहीं होते। जैसे शेरनी से छिन्न होने पर भी सुकौशल माता पिता के साथ सुगति को प्राप्त हुआ। (१२)

प्रसिद्धि के लिए साधु अथवा राजा को मित्र बनाना चाहिए। जैसे मुनिसुव्रत तीर्थंकर ने घोडे को स्वर्ग प्राप्त कराया। (१३)

संसारवास से उद्विग्न लोग अपराध होनेपर क्रोध नहीं करतें, जैसे यंत्र से पीडित स्कन्दकमहर्षि के शिष्य मोक्ष में गये। (१४)

अच्छी तरह से जो सम्यक्त्व का सेवन करता है वह सुलभता से स्वर्ग और मोक्ष का अनुभव करता है। जैसे कार्तिक श्रेष्ठी देवों के राजा बन गये। (१५)

बल होते हुए भी जो दूसरों के उत्क्रोश ताडनादि कर्मों को सहन करता है वह गजसुकुमार की तरह चिरसंचित कर्म का नाश करता है। (१६)

अपना प्राण नाश होने पर भी कृत, कारित और अनुमोदन से अन्य को पीडा करनेवाला वचन श्रेष्ठ मुनि नहीं बोलतें हैं। मेतार्यमुनि की तरह (१७)

संकट आने पर भी धीर पुरुष अनंत सुखरूप शील का त्याग नहीं करतें हैं उन्हें इहलोक और परलोक में सुदर्शन की तरह सुख प्राप्त होता है। (१८)

गुरु के पास भाव से विहित छोटे भी प्रत्याख्यान का जो नाश नहीं करता है वह श्रीवंकचूल की तरह सुख प्राप्त करता है। (१९)

संघ के रक्षण के लिए किये गए क्रोध से समुन्नति प्राप्त होती है। जैसे लब्धि से समृद्ध विष्णु मुनि को शाश्वत स्थान प्राप्त हुआ। (२०)

स्वर्ग और मोक्ष के कारण ऐसे नमस्कार मंत्र का स्मरण इस लोक में भी सुख का कारण होता है। जैसे दमदंत ऋषि ने पुलिंद मिथुन को नमस्कार मंत्र दिया। (२१)

जिनधर्म का पक्षपात ललितांग की तरह जय और विजय करनेवाला होता है। अन्यथा उसके सेवक सज्जन की तरह नाश का कारण होते हैं। (२२)

जिनभक्ति करनेवाला जीव आरामशोभा की तरह विस्मययुक्त यश, वृद्धि, मनोवांछित सुख और राज्य प्राप्त करता है। (२३)

जो निश्चलचित्तवाला पुरुष भाव से एक जीव की रक्षा करता है, उसको हरिबलमत्स्यी की तरह इहलोक और परलोक में लक्ष्मी प्राप्त होती है। (२४)

दुर्गतिमार्ग का कारण जानकर असत्य नहीं बोलना चाहिए और वसुपर्वत और नारद की तरह सर्वदा सत्य बोलना चाहिए। (२५)

दूसरों के धन का अपहरण करना संसार के भय का कारण है अतः जो वह नहीं करतें हैं उन्हें सिद्धदत्त की तरह लोगों के चित्त को आनंदित करनेवाली श्रेष्ठ लक्ष्मी प्राप्त होती है। (२६)

जो मनुष्य मन से और शरीर से पर महिला को अपनी माता समझता है उसको कुलध्वज की तरह सदा मनोवांछित सुख प्राप्त होता है। (२७)

बिना विचार किये जो कार्य करता है तथा दूसरों से करवाता है, वह जीव आम के वृक्ष पर रहा हुआ जयदेव की तरह अंत तक दुःखी होता है। (२८)

जो कृतघ्न जीवनदान का उपकार करनेवाले पुरुष को भी मारता है उसे श्रेणिक का घातक कोणिक की तरह नरक की ज्वाला में पकाया जाता है। (२९)

इन्द्रियों के विकारों से नटित कामांध पुरुष घोर पाप करतें हैं। जैसे सूर्यकान्ता राणी के द्वारा प्रदेशिराजा मर गया। (३०)

सुख की इच्छा रखनेवाले मनुष्य ने कभी भी अधिक लोभ नहीं करना चाहिए। अतिलोभ से विनटित वेश्या गर्दभी हुई थी। (३१)

युवति का संग होने पर भी जो तारुण्य में किंचित् भी विचलित नहीं होता है वह श्रीस्थूलभद्र की तरह संसाररूपी समुद्र से पार होता है। (३२)

जो सम्यग्दृष्टि मनुष्य माता और पिता का सुख चाहता है। वह श्रीआर्यरक्षित की तरह स्व और पर जन को तारता है। (३३)

विनय से विक्रमशूर की तरह इहलोक में सौभाग्य, विद्या, धनसंपत्ति और विवेक प्राप्त होता है। (३४)

जिस के मन में सर्वगुणों में छत्र समान एक विवेक राग होता है वह सभी दोषों का निवारण करके सुमतिशूर की तरह प्रकाशित होता है। (३५)

जो भक्ति से युक्त पुरुष साधुओं को पारणे में पुण्यदान करता है। वह शालिभद्र

की तरह लोकाग्र और भोग की ऋद्धि प्राप्त करता है। (३६)

जो साधुओं के पूजा, सत्कार, विनय, प्रणाम और प्रतिपृच्छनादि कर्मों में अग्रेसर होता है वह मनुष्य विष्णुमुनि की तरह बद्धकर्मों से मुक्त होता है। (३७)

छोटा हो या बडा हो नियम करके उसका पालन करना चाहिए। अल्प नियम भी कमलश्रेष्ठी की तरह बहुत लाभ देनेवाला होता है। (३८)

अपना मन ही आत्मा को नरक, देवलोक या निर्वाण देता है जैसे प्रसन्नचंद्र राजा का मन सुखजनक हुआ। (३९)

विषय से विरक्त मनुष्य जिनपाल की तरह इस लोक में सुख प्राप्त करतें हैं, विषय में आसक्त मनुष्य जिनरक्षित की तरह दुःख प्राप्त करते हैं। (४०)

लोभ में उत्सुक मनुष्य पुत्र, मित्र, बांधव और माता का भी हनन करतें हैं। जैसे चार सुवर्ण पुरुष लोभ के कारण मर गये। (४१)

बहुत प्रकार के मणि, सुवर्ण, द्रव्य और कन्या आदि से निमंत्रित होने पर भी जो पुरुष लुब्ध नहीं होता है, वह साधु सत्पुरुष वज्र ऋषि की तरह स्व और दूसरों का तारक होता है। (४२)

मनुष्य के अपूर्व रूप से क्या? और कुल से क्या? मनुष्य का सिर्फ एक तप ही कर्म के नाश का कारण बनता है। (४३)

वसुदेव को खेचर और भूचरों की बहत्तर हजार युवतियों का स्वामित्व मिला वह तपरूपी वृक्ष का ही फल है। (४४)

संतोष से मनुष्य को इहलोक में अधिक संपत्ति प्राप्त होती है श्रीरत्नसार की तरह लोकोत्तर सौभाग्य मिलता है। (४५)

अन्य मंत्र और तंत्र शंका से कभी भी सिद्ध नहीं होता है तो दोषयुक्त सम्यक्त्व मनुष्य को कैसे फल देगा? गंधार की तरह। (४६)

जो पुरुष उत्तम महिला का संग करता है, कृतज्ञ राजा का संग करता है और निर्लोभी व्यक्ति को मित्र बनाता है वह मनुष्य प्रभाकर की तरह कभी भी दुःखी नहीं होता है। (४७)

जो स्वयं अपने प्राण देकर जीवों का रक्षण करता है और रक्षण करवाता है,

उसे भीमकुमार की तरह चित्त को आश्चर्य देनेवाली ऋद्धि प्राप्त होती है। (४८)

मासक्षपक मुनि की तरह कठिन क्लेश करनेवाला तप हो (वह फल नहीं देता है), कूरगडु मुनि की तरह अपने कार्य को उपशम योग से साधित करता है। (४९)

मन में यदि क्रोध प्रकट होता है तो तप, संयम, क्रिया, श्रुत, शील आदि गुण निरर्थक है, मंडूकी का नाश करनेवाले साधु की तरह क्रोध से सम्यक्त्व का और चारित्र का भेद होता है। (५०)

पात्र और उपधि का प्रतिलेखन करते हुए मुनि कर्म का क्षय करते हैं। समभाव में स्थित वल्कलचीरी ने तत्काल सकल कर्म का क्षय किया। (५१)

जो मनुष्य देव, गुरु और धर्म की निंदा करता है वह सोम की तरह कठिन दुःख प्राप्त करता है और जो मनुष्य उनकी प्रशंसा करता है, वह भीम की तरह अतुल सुख प्राप्त करता है। (५२)

जो साधुओं को अल्प और बहुत दान देता है और दिलाता है वह चंद्रधवल और धर्मदत्त की तरह अगणित ऐश्वर्य का स्वामी होता है। (५३)

इस लोक में शील से अत्यंत दुःख भी सुख बनता है, वियोगी जनों का संयोग होता है और दरिद्र अवस्था में भी सुंदरराज की तरह राज्य प्राप्त होता है। (५४)

चोरी करने से उपार्जित कर्म तप करने पर भी बिना फल दिये नहीं जाता। अतः महाबल की कथा को सुनकर चोरी नहीं करनी चाहिए। (५५)

युवती अनर्थ का मूल है, चंचल चित्तवाली है और नरक का द्वार है ऐसा विचार करके काष्ठश्रेष्ठी की तरह युवतियों का संग छोड देना चाहिए। (५६)

अकीर्ति, वध, बंध, दुर्गति और धनसंपत्ति का कारण अपने इन्द्रियों का समूह है उसे जो जीतता है उसे विजय ऋषि की तरह इहलोक और परलोक में विजय प्राप्त होता है। (५७)

विनय और बहुमान के साथ जो गुरु के पास अध्ययन करतें हैं, उनकी विद्या श्रेणिकराजा की तरह सफल होती है और सद्गति का कारण बनती है। (५८)

चार प्रकार की बुद्धि के निधान, जगत् में प्रधान और अपूर्व धैर्यवान् पुरुष भी धर्म के बहाने ठगे जाते हैं जैसे अभयकुमार वेश्या के द्वारा ठगे गये। (५९)

दयादि सत्त्व से युक्त और पुण्य को धारण करनेवाला पुरुष श्रीविक्रमशूर की तरह मन में चिंतन किया हुआ स्वप्न में भी दुर्लभ ऐसा अर्थ को शीघ्र ही सिद्ध करता है। (६०)

कूर्मापुत्र के समान माता और पिता के उपर भक्ति रखनेवाला अन्य पुरुष कौन है? जो ज्ञानी होते हुए भी उनकी भक्ति के कारण लंबे काल तक गृहस्थवास में रहे। (६१)

भाव से शुद्ध चित्तवाला पुरुष यदि कर्मवश के कारण अकार्य करता है तो उसे कर्मबंध नहीं होता है। इस विषय में आषाढभूति का उदाहरण है। (६२)

बुद्धिमान् पुरुष कल्प के अंत में भी किसी से विरोध नहीं करता वेश्या शुक के राग से मुग्धमुंड से विडंबित हुई। (६३)

अत्यंत पाप से युक्त जीव भी संसारवास से उद्विग्न होकर सहस्रमल्ल की तरह घोर तपों से इहलोक में शुद्ध होता है। (६४)

अत्यंत निबिड संकटरूपी सागर में गिरे हुए किंतु जिनधर्मरूपी जहाज में लीन हुए जीव महिला से उद्विग्न घृष्ट की तरह संसार के पार को पाते है। (६५)

समिति और गुप्ति से युक्त श्रमण स्वयं कलंक प्राप्त होने पर भी दूसरों को पीडा करनेवाला वचन नहीं कहते है। इस विषय में मुनिपति का दृष्टांत है। (६६)

उद्यम कथनादि से क्या होता है? जो भविष्य में होना है वह होता ही है। जैसे की जनमेजय राजा को यज्ञ से रोका गया तो भी उसने यज्ञ किया। (६७)

जीवों को शरीरपीडा देनेवाले दुष्कर तप से क्या होता है? यदि विशुद्ध यतना न हो तो सुषढ की तरह तप विफल होता है। (६८)

भाव के बिना स्वीकार किया हुआ चारित्र भी शीघ्र ही अधिक फल देता है। पूर्वभव में एक दिन चारित्र ग्रहण करनेवाला रंक संप्रतिराजा हुआ। (६९)

संसार में कुछ लोग बहुत सारे उपदेश से भी ब्रह्मदत्त की तरह ज्ञान प्राप्त नहीं करते है। कुछ लोग नलवर्म राजा की तरह अल्प उपदेश से भी लघु कर्मवाले होते हैं। (७०)

लोभ को जीतनेवाले मनुष्य को देखकर लोभ से युक्त स्वच्छ मनवाले पुरुष अपने लोभ का त्याग करते हैं। जैसे जंबू को देखकर प्रभव आदि ने अपने लोभ का त्याग किया। (७१)

जो पुरुष अल्प जिनद्रव्य का भक्षण करके बाद में शीघ्र से अर्पण करता है वह अतुल दुःख को प्राप्त करके बाद में लक्ष्मीपुंज की तरह सुख को प्राप्त करता है। (७२)

जो मूढमनवाला मनुष्य साधारण जिनद्रव्य का विनाश करता है वह नरक में जाकर सागरश्रेष्ठी की तरह दुःख सहन करता है। (७३)

जो तीर्थ के रक्षण के लिए जिनगृह का जीर्णोद्धार करता है वह गिरनार का उद्धार करनेवाला सज्जन की तरह सर्वदा अपने तथा अन्यों के तारण का कारण बनता है। (७४)

पिता के द्वारा स्वीकृत बात को जो पूर्ण करते हैं वे ही पुत्र है। जैसे वाग्भट ने शत्रुंजय का उद्धार किया। (७५)

जो मनुष्य भक्ति से जिनगृह का निर्माण करते हैं वे अर्बुदगिरि पर चैत्य निर्माण करनेवाले विमलमंत्री की तरह पुण्य से युक्त होते हैं, धन्य होते है और देवों के भी पूज्य होते हैं। (७६)

जिनवर की थोडी भी पूजा मनुष्यों को चिंतामणि की तरह सुख देती है और कुमारपाल राजा की तरह संसार समुद्र से पार करती है। । (७७)

सकल गुणों का मूल सत्त्व जिस के मन में उल्लसित होता है उसको शीघ्र ही अजापुत्र की तरह इहलौकिक और पारलौकिक सिद्धि प्राप्त होती है। (७८)

संकट में पतित महिला अपनी बुद्धि से निर्मल शील का रक्षण करती है वह शीलवती की तरह लोकपूज्य महासती बनती है। (७९)

थोडा ही प्रत्याख्यान करके जो आजीवन निर्वहण करते हैं उन्हें रूपसेन की तरह मनोवांछित सुख मिलता है। (८०)

जो कठिन शक्ति से कभी भी सिद्ध नहीं होता वह अपनी बुद्धि से आसानी से सिद्ध हो जाता है इस विषय में धनपति का पुत्र दृष्टांत है। (८१)

लोक में इंद्रजाल की तरह सभी अनित्य देखनेवाले प्रबुद्ध ऐसे प्रत्येकबुद्ध मुनि बोध प्राप्त करते हैं, वे धन्य हैं। (८२)

महिला कूट कपट से शुद्ध पुरुष को निःशंक फसाती है। जैसे दुःशील शीलवती ने निद्रा में रहे हुए सुवर्णकार को फसाया था। (८३)

जिनधर्म से भावित जीव घातिकर्म का मूल सहित नाश करते है उनको मंगलकलश की तरह मंगल की माला प्राप्त होती है ऐसा श्रुत में कहा गया है। (८४)

जो करुणा से युक्त मनवाले मनुष्य आज्ञा के अनुसार जीवों के उपर दया करते हैं वे दुःख में पडते हैं तो भी श्रीवत्सराज की तरह सुख प्राप्त करते हैं। (८५)

साधुओं के पारणे में जो सुमित्र की तरह भाव से दान देता है वह विश्व को चमत्कृत करनेवाली सम्पत्ति को प्राप्त करके मोक्ष में जाता है। (८६)

आयुष्य अत्यंत कम है उसमें धार्मिक मनुष्य को गृहमंडनादि कर्म से क्या प्राप्त होता है? लोमस को देखकर इंद्र स्वर्ग बनाने से उद्विग्न हो गया। (८७)

शुभगुरु के पास सुनी हुई एक भी गाथा रोहचोर की तरह कार्य को सिद्ध करनेवाली, मिथ्यात्व का नाश करनेवाली और मोक्ष को देनेवाली होती है। (८८)

अत्यंत पाप से युक्त जीव भी अर्जुनमाली की तरह श्रवण से कल्याण, पाप, स्वर्ग और शिव को जानते हैं वे शुद्ध हो जाते हैं। (८९)

प्रद्युम्नकुमार की माता की तरह उत्तम शील, आचार और गुण से युक्त पुत्र से मातापिता के सकल मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। (९०)

बहुत पुण्य के योग से मन में चिंतित सभी कार्य प्रयोजन के साथ सिद्ध होते हैं। पुण्य कल्पवृक्ष की तरह फल देता है। इस विषय में विद्याविलास का उदाहरण है। (९१)

धर्म में अग्रणी व्यक्ति को मित्र बनानेवाला सारसम्यक्त्व को प्राप्त करता है। जैसे हासा-प्रहासा के स्वामी को पूर्वमित्र ने प्रतिबोधित किया। (९२)

जीव स्फटिक के समान है। उसका जैसा सहवास होता है वैसा रंग होता है। अतः सेचनक श्रुतयुगल को देखकर उत्तम संग करना चाहिए। (९३)

अपनी बुद्धि से जीव रोहक आदि की तरह हमेशा विपुल ऋद्धि, मन से चिंतित अर्थ की सिद्धि, राजा के द्वारा सन्मान और पूजा प्राप्त करता है। (९४)

निंदा करने से जीव दूसरों ने किया हुआ सभी पाप स्वयं भोगता है और पूर्वजन्म के सुकृत का नाश करता है। इस विषय में वृद्धामहिला का उदाहरण है। (९५)

शील के द्वारा संपत्ति, कीर्ति, अनुपम रूप और गुणों का माहात्म्य प्राप्त होता है। इस विषय में गजसिंहकुमार उदाहरण है। (९६)

पापकर्मों का त्याग करके जो पर्वतिथि का पालन करता है, वह श्रीरत्नशेखरराजा की तरह मुक्तिसुख को प्राप्त करता है। (९७)

छत्तीस गुणों से युक्त शुद्ध प्ररूपणा करनेवाले आचार्य जिनेंद्र की तरह स्व और पर का तारक होते हैं। जैसे श्री गणिवर आनंदविमलसूरि हैं। (९८)

प्रतिरूपादि गुरु के गुण और वैराग्य से युक्त जो पुरुष गण के भार को धारण करता है वह श्रीविजयदानसूरिजी की तरह तीर्थंकरों के समान चमकता है। (९९)

जो सूत्रार्थरत्न को धारण करता है, द्वादशांग का पठन और पाठन करता है वह तपागच्छ में उपाध्याय श्रीराजविमल की तरह शोभता है। (१००)

श्रीहीरविजय सूरि के अनुग्रह से राजविमल के शिष्य कवि यशोविजय ने उपदेशरत्नाकर नाम का ग्रंथ रचा है। (१०१)

जब तक चंद्र, सूर्य और सागर धरती पर स्थिर है, तब तक अधिक जनों के द्वारा पढे जानेवाले उपदेशरत्नाकर ग्रन्थ की जय हो। (१०२)

॥महोपाध्यायश्री५श्रीराजविमलगणि के शिष्य

पं.जसविजयगणि के द्वारा

गणिश्रेष्ठ श्री भीमर्षि वाचन के लिए

रचा हुआ उपदेशरत्नाकर ग्रंथ समाप्त हुआ॥

पण्डितश्रीयशोविजयगणिकृतः

॥उपदेशरत्नाकरः॥

गुर्जरसारानुवादः

- साध्वीजी श्रीधन्यहंसाश्रीजी म.

श्रीगुरुनां चरणोनी कृपाथी कविओनी माता सरस्वतीने याद करीने वैराग्यना सुखने उत्पन्न करनार एवा विविध उपदेशना शतकनी रचना करुं छुं. (१)

नित्य सुखनी ईच्छावाळा जीवे नित्य सुपात्रदान आपवुं जोईए. जेम घीना दानना प्रभावथी प्रथम तीर्थंकर थया. (२)

ज्ञानथी, ध्यानथी, तपथी, दान अने शीलथी संयमनी भावना करवाथी शुं? जिनेंद्रनी पूजाज माणसोने श्रेणिकनी जेम अरिहंत पद आपनारी छे. (३)

जे व्यक्ति साधुओने आहार आदि आपीने भोजन करे छे ते भरत चक्रवर्तीनी जेम अचल लक्ष्मीने पामे छे. (४)

श्रमणोनी नित्य वैयावच्च करनार शुद्ध परिणामवाळो जीव मोक्षमां जाय छे. जेम बलवान् बाहुबली भरतने जीतीने मोक्षमां गयां. (५)

जो मोहने छोडवा असमर्थ छो तो पण नित्य भगवान उपर मोह करो. जेम तप अने संयम रहित मरुदेवी पण जल्दी मोक्षमां गई. (६)

जे क्षणभंगुर शरीरने जाणीने संयम ग्रहण करे छे ते सनत्कुमारनी जेम देवोने पण सदा पूजवा योग्य थाय छे. (७)

जो रोगादि वडे पीडित जीव धर्मनी भावनाथी रंगायेलो होय ते नमिराजनी जेम तत्काल मोक्ष पामे छे. (८)

जेम वाहन पोताने अने तेमां बेसनारने तारे छे. तेम बुद्धिमान् व्यक्ति पोताना आश्रितने अने पोताने तारे छे. जेम पुंडरिकगिरि पर उत्पन्न थयेला पोपटे मरेला पांच करोड साधुओने तार्या. (९)

ગુરુના ઉપદેશથી હોંશિયાર પુરુષો પોતાના ઝઘડા છોડી દે છે. જેમ ઋષભદેવના પુત્રો અને બીજા (ઝઘડો છોડીને) તરત મોક્ષમાં ગયા. (૧૦)

કરુણાના રસથી ભરેલા માણસોને આપવા અને નહીં આપવા યોગ્ય શું હોય છે? મેઘરથે પક્ષીની રક્ષા માટે પ્રાણોને આપ્યા. (૧૧)

શ્રમણો ક્યારે પણ અપકારી માણસ પર ખરાબ વિચાર કરતા નથી. જેમ વાઘણે ફાડેલા પણ સુકોશલ મુનિ પિતા સાથે સદ્ગતિને પામ્યા. (૧૨)

પ્રસિદ્ધિ માટે રાજાને કે સાધુને મિત્ર બનાવવો. જેમ મુનિસુવ્રત સ્વામીએ સારા ઘોડાને સ્વર્ગમાં પહોંચાડ્યો. (૧૩)

સંસારના વાસથી ઉદ્વિગ્ન થયેલા લોકો અપરાધી લોકો પર પણ ક્રોધ કરતા નથી. જેમ યંત્ર વડે પીડાતા સ્કંદક મુનિના શિષ્યો મોક્ષમાં ગયા. (૧૪)

સારી રીતે સમ્યક્ત્વને સેવવાથી પણ સ્વર્ગ અને મોક્ષ સુલભ છે. જેમ હમણા કાર્તિક શ્રેષ્ઠિ ઇંદ્રપણું ભોગવે છે. (૧૫)

જે બળ હોવા છતાં બીજાનો ગુસ્સો, માર આદિ સહન કરે છે. તે ગજસુકુમાલની જેમ ઘણા ભેગા થયેલા કર્મને હણે છે. (૧૬)

જે મુનિવૃષભો પોતાના પ્રાણના ધ્વંસથી પણ કરણ, કરાવણ અને અનુમોદનાથી બીજાને પીડા કરનારું વચન બોલતા નથી તેઓ મેતાર્ય મુનિની જેમ (કૃતકૃત્ય છે.) (૧૭)

જે ધીર માણસો સંકટમાં પડવા છતાં અનંત લીલાવાળા શીલને છોડતા નથી તેઓને આ લોક અને પરલોકમાં સુદર્શન શેઠની જેમ સુખ થાય છે. (૧૮)

જે લોકો ગુરુની પાસે ભાવથી કરેલું થોડું પણ પચ્ચક્ખાણ છોડતા નથી તેઓ શ્રી વંકચૂલની જેમ સુખ પામે છે. (૧૯)

સંઘની રક્ષા માટે કરેલો ક્રોધ ઉન્નતિને આપે છે. જેમ લબ્ધિથી સમૃદ્ધ વિષ્ણુ મુનિ શાશ્વત સ્થાનને પામ્યા. (૨૦)

લોકમાં સ્વર્ગ અને મોક્ષ આપનારાં નવકારનું સ્મરણ સુખનું કારણ થાય છે. દમદંત ઋષિએ આદિવાસી દંપતીને સુખના હેતુ રૂપ નવકાર આપ્યો હતો. (૨૧)

જિનધર્મનો પક્ષપાત લલિતાંગની જેમ જય-વિજય આપનારો થાય છે. અન્યથા તેનાથી વિપરીત જિનધર્મનો દ્વેષ તેના નોકર સઙ્કનની જેમ ક્ષયનું કારણ થાય છે. (૨૨)

જિનભક્તિ કરનાર જીવ આરામશોભાની જેમ વિસ્મયકારક ઋદ્ધિને, યશને, મનમાં ઇચ્છિત ભોગોને અને રાજ્યને પામે છે. (૨૩)

જે નિશ્ચલ ચિત્તવાળો જીવ ભાવથી એક જીવની રક્ષા કરે છે તે આ લોકમાં અને પરલોકમાં હરિબલ માછીમારની જેમ લક્ષ્મીને પામે છે. (૨૪)

દુર્ગતિના માર્ગનું કારણ જાણીને ખોટું બોલવાનો ત્યાગ કરવો જોઇએ. વસુ,પર્વત અને નારદની જેમ સદા સત્ય જ બોલવું જોઇએ. (૨૫)

જેઓ ભવના ભયને કરનારા બીજાના ધનનું હરણ કરતા નથી તેમને જ સિદ્ધદત્તની જેમ લોકોના ચિત્તને આનંદ આપનારી શ્રેષ્ઠ લક્ષ્મી મળે છે. (૨૬)

જે મનુષ્ય મનથી અને કાયાથી પરસ્ત્રીને માતા સમાન માને છે તે કુલધ્વજની જેમ સદા મનવાંછિત સુખોને પામે છે. (૨૭)

જે વિચાર્યા વગરનું કાર્ય કરે છે અથવા બીજા દ્વારા કરાવે છે, તે જીવન પર્યંત આંબાના ઝાડ પર રહેલ જયદેવની જેમ શોક કરે છે. (૨૮)

જે કૃતઘ્ન વ્યક્તિ જીવનદાનનું ઉપકાર કરનાર માણસને પણ મારે છે, તે શ્રેણિકના ઘાતક કોણિકની જેમ નરકની જ્વાળામાં રંધાય છે. (૨૯)

ઇંદ્રિયના વિકારથી નડાયેલા કામાંધ લોકો ઘોર પાપ કરે છે. જેમ સૂર્યકાંતા દ્વારા પ્રદેશી રાજા મરાયો. (૩૦)

સુખની ઇચ્છા રાખતા મનુષ્યોએ ક્યારે પણ વધારે લોભ ન કરવો જોઇએ. જેમ વધારે લોભથી નડાયેલી વેશ્યા ગધેડી બની. (૩૧)

તારુણ્યમાં યુવતિનો સંગ હોવા છતાં જે વ્યક્તિના વાળનો અગ્રભાગ પણ સ્થૂલિભદ્રની જેમ ચલિત થતો નથી તેનું સંસારસમુદ્રથી રક્ષણ થાય છે. (૩૨)

જે અમિથ્યાત્વી ધર્મી માતા-પિતાના સુખની ઇચ્છા કરે છે તે શ્રી આર્યરક્ષિતની જેમ બીજા માણસોને તારનારો થાય છે. (૩૩)

વિનયથી આ લોકમાં વિક્રમશૂરની જેમ સૌભાગ્ય, વિદ્યા, ધન, સંપત્તિ,

વિવેક અને બીજું સારું મળે છે. (૩૪)

જેના મનમાં બધા ગુણના છત્ર જેવો એક વિવેકનો રાગ છે તે બધા દોષને ઢાંકીને સુમતિશૂરની જેમ પ્રસિદ્ધિ પામે છે. (૩૫)

જે સાધુઓના પારણામાં ભક્તિવાળો થઇને પુણ્ય કરનારું દાન આપે છે તે શાલિભદ્રની જેમ લોકમાં અગ્ર ભોગની ઋદ્ધિને પામે છે. (૩૬)

સાધુને પૂજા, સત્કાર, વિનય, પ્રણામ, કામ પુછવું વગેરે કામમાં તત્પર રહેનારો માણસ વિષ્ણુની જેમ બાંધેલું કર્મ શિથિલ કરે છે. (૩૭)

થોડો અથવા વધારે નિયમ કરીને પાળવો જોઇએ. તેથી કમલશ્રેષ્ઠીની જેમ ઘણો લાભ થાય છે. (૩૮)

પ્રસન્નચંદ્રજી જેમ સુખને આપનારું પોતાનું મન આત્માને નરક, દેવલોક કે મોક્ષ આપે છે. (૩૯)

મનુષ્યલોકમાં વિષયથી વિરક્ત મનુષ્યો જિનપાલની જેમ સુખ પામે છે અને વિષયાસક્ત મનુષ્યો જિનરક્ષિતની જેમ દુઃખ પામે છે. (૪૦)

લોભાતુર મનુષ્યો પુત્રને, મિત્રને, ભાઇને અને માતાને મારે છે. જેમ ચાર લોભાતુર સુવર્ણ પુરુષો મરી ગયા. (૪૧)

જે ઘણાં પ્રકારના મણિ, સોનું, પૈસો, કન્યા આદિથી નિમંત્રિત કરાયેલો પણ લોભાતો નથી તે સાચો સત્પુરુષ વજ્રઋષિની જેમ બીજાને તારે છે. (૪૨)

માણસના અપૂર્વ રૂપથી શું? કુલથી શું? દેવોથી પૂજાયેલા હરિકેશબલની જેમ એક તપ જ કર્મના ક્ષયને કરનારો છે.. (૪૩)

ખેચરોનું, ભૂચરોનું, બહોતેર હજાર યુવતીઓનું સ્વામિત્વ વસુદેવે પ્રાપ્ત કર્યું તે તપરૂપી વૃક્ષનું જ ફળ છે. (૪૪)

આ લોકમાં મનુષ્યોને સંતોષથી શ્રી રત્નસારની જેમ ઘણી લક્ષ્મી અને લોકોત્તર સૌભાગ્ય પ્રાપ્ત થાય છે. (૪૫)

બીજા પણ મંત્ર-તંત્રો શંકાથી ક્યારે પણ સિદ્ધ થતાં નથી ત્યારે ગંધારની જેમ દોષવાળું સમ્યક્ત્વ ક્યાંથી ફળે? (૪૬)

જે માણસો ઉત્તમ મહિલાનો સંગ કરે છે, કૃતજ્ઞ પુરુષનો સંગ કરે છે અને લોભ વિનાના વ્યક્તિને મિત્ર બનાવે છે તે પ્રભાકરની જેમ ક્યારેય સીદાતો

નથી. (૪૭)

જે પોતે પોતાના પ્રાણ આપીને પણ જીવોની રક્ષા કરે છે અથવા કરાવે છે તે ભીમકુમારની જેમ ચિત્તને ચમત્કાર કરનારી ઋદ્ધિને પામે છે. (૪૮)

માસક્ષમણ કરનાર મુનિની જેમ ઘણા ક્લેશને કરનારો તપ હોય (તે નિષ્ફળ જાય છે) પણ કુરગડુમુનિની જેમ પોતાનું કાર્ય ઉપશમયોગથી સાધે છે. (૪૯)

જો ક્રોધ હોય તો તપ, સંયમ, શ્રુત અને શીલગુણ દ્વારા શું? (ક્રોધને કારણે) દેડકીની વિરાધના કરનારા સાધુની જેમ સમ્યક્ત્વનો અને ચારિત્રનો ભેદ થાય છે. (૫૦)

સમભાવમાં રહેનાર સાધકપાત્ર ઉપધિનું પ્રતિલેખન કરતા વલ્કલચીરી મુનિની જેમ તત્કાળ કર્મનો ક્ષય કરે છે. (૫૧)

જે વ્યક્તિ દેવગુરુ ધર્મની હીલના કરે છે તે ભીમની જેમ કઠિન દુઃખ પ્રાપ્ત કરે છે અને જે વ્યક્તિ તેમની પ્રશંસા કરે છે તે સોમની જેમ અતુલ સુખને પામે છે. (૫૨)

જે વ્યક્તિ સાધુઓને થોડું કે વધારે દાન આપે છે અને બીજા પાસે અપાવે છે તે ચંદ્રધવલ અને ધર્મદત્તની જેમ ઘણી વિભૂતિઓનો સ્વામી થાય છે. (૫૩)

આ લોકમાં શીલ દ્વારા દુઃખ પણ સુખ બની જાય છે, વિયોગીનો સંયોગ થાય છે, દરિદ્ર અવસ્થામાં પણ સુંદરરાજાની જેમ રાજ્ય પ્રાપ્ત થાય છે. (૫૪)

તપ કરવાં છતાં પણ ચોરી વડે ઉપાર્જેલું પાપ વિવેક વિના જતું નથી. મહાબલના ચરિત્રને સાંભળીને પણ ચોરી કરવી ન જોઇએ. (૫૫)

અનર્થની મૂળ, ચંચળ ચિત્તવાળી, નરકના દ્વારભૂત યુવતીને જાણીને કાષ્ઠ શ્રેષ્ઠીની જેમ તેઓનો સંગ છોડવો જોઇએ. (૫૬)

જે વ્યક્તિ અકીર્તિ, વધ, બંધન અને દુર્ગતિના કારણભૂત પોતાના ઇંદ્રિયના સમૂહને જિતે છે. તે આ લોકમાં અને પરલોકમાં વિજયમુનિની જેમ વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૭)

જે વ્યક્તિ ગુરુની પાસે વિનય અને બહુમાનપૂર્વક વિદ્યાને ભણે છે તેઓને આ ભવમાં શ્રેણિકની જેમ સફળ અને સુગતિના હેતુરૂપ થાય છે. (૫૮)

ચાર પ્રકારની બુદ્ધિના નિધાન, ભુવનમાં પ્રધાન, ઘણા જ હોંશિયાર પુરુષો પણ અભયકુમારની જેમ વેશ્યા વડે ધર્મના બહાનાથી ઠગાય છે. (૫૯)

પુણ્યને ધારણ કરનાર અને દયા આદિ સત્ત્વથી યુક્ત એવો પુરુષ શ્રી વિક્રમશૂરની મનમાં વિચારેલા સ્વપ્નમાં પણ દુર્લભ એવા અર્થને સંપૂર્ણ જલ્દીથી સાધે છે. (૬૦)

કૂર્માપુત્ર જેવો બીજો કયો માતાપિતાનો ભક્ત છે જે જ્ઞાની હોવા છતાં પણ તેમની અનુકંપાથી ઘરમાં રહ્યો. (૬૧)

ભાવથી શુદ્ધ ચિત્તવાળો વ્યક્તિ કર્મના વશથી જે કંઇ કાર્ય કરે છે તેમ છતાં તેમને કર્મબંધ થતો નથી. તેમાં ઉદાહરણ આષાઢાભૂતિનું છે. (૬૨)

બુદ્ધિમાન પુરુષ પણ વિરોધ કરતા નથી. પોપટના રાગથી મુગ્ધ સાધુ વેશ્યા દ્વારા કલ્પાન્તે તકલીફમાં કોઈ સાથે મુકાયા. (૬૩)

ઘણા પાપના ભારથી ભરેલો અને સંસારના વાસથી ઉદ્વિગ્ન જીવ આ ભવમાં સહસ્રમલ્લની જેમ ઘોર તપથી જલ્દી શુદ્ધ બને છે. (૬૪)

અતિ કઠિન સંકટરૂપ સમુદ્રમાં પડેલા જિનધર્મરૂપી વહાણમાં લીન જીવો મહિલાથી ઉદ્વિગ્ન કુબડાની જેમ પાર પામે છે. (૬૫)

સમિતિ અને ગુપ્તિવાળા શ્રમણો કલંકને પામવા છતાંપણ બીજાને પીડા આપનારું વચન બોલતા નથી. અહીં કલંકને પ્રાપ્ત થયેલા મુનિપતિનું દૃષ્ટાંત છે. (૬૬)

થવાનું હોય તે થાય જ છે. પ્રયત્ન કરવાથી અને કહેવાથી શું થવાનું? જેમ જનમેજયરાજા યજ્ઞ કરવાથી નિવારાયો તો પણ તેણે યજ્ઞ કર્યો. (૬૭)

શરીરને પીડા આપનાર દુષ્કર તપથી શું? જો વિશુદ્ધ જયણા ન હોય તો તે પણ સુષઢની જેમ નિષ્ફળ જાય છે.. (૬૮)

ભાવ વિના લીધેલું ચારિત્ર પણ પૂર્વભવમાં એક દિવસ ગ્રહણ કરનાર સંપ્રતિ રાજાની જેમ શીઘ્ર ઘણું ફળ આપે છે. (૬૯)

સંસારમાં ઘણા ઉપદેશથી પણ કોઇક બ્રહ્મદત્તની જેમ બોધ પામતો નથી અને થોડા ઉપદેશથી પણ ઓછા કર્મવાળા નલવર્મરાજાની જેમ બોધ પામે છે. (૭૦)

લોભને જીતેલા માણસને જોઇને લોભથી નડાયેલા લોકો પોતાના લોભને છોડી દે છે. જેમ પ્રભવ વગેરે સ્વચ્છ મનવાળા સત્પુરુષોએ જંબૂને જોઇને લોભનો ત્યાગ કર્યો હતો. (૭૧)

જે થોડા પણ દેવદ્રવ્યનું ઉતાવળથી ભક્ષણ કરે છે અને પછી પાછું આપે છે તે લક્ષ્મીપુંજની જેમ ઘણું દુઃખ ભોગવીને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૨)

જે મૂઢ મનવાળો માણસ સાધારણ દેવદ્રવ્યનો વિનાશ કરે છે તે સાગર શ્રેષ્ઠીની જેમ નરકમાં જઇને દુઃખ ભોગવે છે. (૭૩)

જે વ્યક્તિ તીર્થની રક્ષા માટે દેરાસરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવે છે તે સદા પોતાને અને બીજાને તારવામાં કારણ રૂપ બને છે. જેમ સજ્જનમંત્રીએ ગિરનારમાં તીર્થની રક્ષા માટે દેરાસરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવ્યો છે. (૭૪)

જે પુત્રો પિતાએ કરેલી વાતને પૂરી કરે છે તે સાચા પુત્ર છે. વાગ્ભટમંત્રીએ શત્રુંજયનો ઉદ્ધાર કર્યો હતો. (૭૫)

તેઓ ધન્ય છે, કૃતપુણ્ય છે જેઓ ભક્તિથી દેરાસર કરે છે. તે વ્યક્તિઓ આબુમાં ચૈત્ય બનાવનારા વિમલમંત્રીની જેમ દેવોને પૂજ્ય હોય છે. (૭૬)

સંસાર રૂપી સમુદ્રમાં નાવ સમાન, ચિંતામણિ જેવી થોડી પણ જિનવરની પૂજા માણસોને કુમારપાળની જેમ સુખ આપનારી થાય છે. (૭૭)

જેમનાં મનમાં બધા ગુણોનું મૂળ સત્ત્વ ઉલ્લસિત થાય છે તેમને અજાપુત્રની જેમ જલ્દી આ લોક અને પરલોકની અલૌકિક સિદ્ધિ થાય છે. (૭૮)

જે સંકટમાં પડેલી અબલા એવી મહિલા નિર્મલ શીલની રક્ષા કરે છે, તે મહાસતી શીલવતીની જેમ બુદ્ધિથી જગત્પૂજ્ય થાય છે. (૭૯)

જે લોકો થોડું પણ પચ્ચક્ખાણ કરીને જીવન પર્યંત પાળે છે તે રૂપસેનની જેમ મનના ઇચ્છિત ભોગોને પામે છે. (૮૦)

જે કઠિન કાર્ય શક્તિથી ક્યારે પણ સિદ્ધ થતું નથી તે બુદ્ધિથી સહેલાઇથી સધાય છે. અહીં ધનપતિનો પુત્ર ઉદાહરણ છે. (૮૧)

લોકમાં ઇંદ્રજાલ જેવું બધું અનિત્ય જોઇને ધન્ય એવા પ્રત્યેકબુદ્ધમુનિઓ બોધ પામે છે. (૮૨)

મહિલાઓ કુડ-કપટથી શંકા વગર શુદ્ધ પુરુષોને છળે છે. ખરાબ શીલવાળી શીલવતીએ જેને ઊઘ નહોતી આવતી તેવા સોનીને ઠગ્યો હતો. (૮૩)

જિનધર્મથી ભાવિત આત્મા ઘાતી કર્મને મૂળમાંથી હટાવે છે. તેમને મંગલકળશની જેમ મંગલની માળાઓ પ્રાપ્ત થાય છે. એવું શ્રુતમાં કહ્યું છે. (૮૪)

જે મનુષ્યો આજ્ઞાપૂર્વક કરુણાવાળા મનથી જીવદયા કરે છે તેઓ દુઃખોમાં પડેલા છતાં પણ શ્રી વત્સરાજાની જેમ સુખ પામે છે. (૮૫)

જે સુમિત્રની જેમ સાધુઓને પારણામાં ભાવથી દાન આપે છે તે વિશ્વને આશ્ચર્ય પમાડનારી લક્ષ્મીને ભોગવીને મોક્ષને પામે છે. (૮૬)

ધાર્મિક માણસોને તુચ્છ એવા આયુષ્યમાં ઘર સજાવવાં વગેરે કરીને શું? પક્ષીને જોઇને ઇંદ્ર સ્વર્ગ બનાવવામાં નિર્વિણ્ણ થયો. (૮૭)

શુભ ગુરુ પાસે સાંભળેલી એક પણ ગાથા રોહિણિયા ચોરની જેમ કાર્યમાં સુખ આપનારી, મિથ્યાત્વરૂપી અંધકારને હરનારી અને મોક્ષ આપનારી થાય છે. (૮૮)

જેઓ સાંભળવાથી કલ્યાણ, પાપ, સ્વર્ગ અને મોક્ષને જાણે છે તેઓ ઘણા પાપથી ભરેલા અર્જુનમાળીની જેમ શુદ્ધ થાય છે. (૮૯)

માતા-પિતાના બધી ઇચ્છાઓ શીલ અને આચાર ગુણવાળા પુત્ર વડે જ સફળ થાય છે. પ્રદ્યુમ્નકુમારની માતાની જેમ. (૯૦)

ઘણાં પુણ્યના યોગવાળું એવું ચિંતવેલું કાર્ય પુરુષને વિદ્યાવિલાસની જેમ કલ્પતરુની જેમ અર્થ સાથે ફળે છે. (૯૧)

ધર્મમાં શ્રેષ્ઠ એવા પુરુષને મિત્ર બનાવવાથી સારભૂત સમ્યક્ત્વ મળે છે. જેમ પૂર્વના મિત્રે હાસા અને પ્રહાસાના સ્વામીને પ્રતિબોધ કર્યો. (૯૨)

સ્ફટિક તુલ્ય જીવને જેવો સંગ કરે તેવો રંગ લાગે છે. તેથી ઉત્તમ સંગ જોઇને સેચનકના બે પુત્રની જેમ (સારા માણસોનો સંગ કરવો જોઇએ). (૯૩)

રોહક જેવા જીવો પોતાની બુદ્ધિથી વિપુલ ઋદ્ધિ, મનમાં વિચારેલ અર્થ અને રોજ રાજા દ્વારા માન તથા પૂજા પામે છે. (૯૪)

નિંદાથી બીજાએ કરેલા બધા પાપ જીવ પોતે ભોગવે છે. નિંદા પૂર્વે કરેલા સુકૃતને નાશ કરે છે. અહીં વૃદ્ધમહિલાનું ઉદાહરણ છે. (૯૫)

સંપત્તિ, કીર્તિ, અનુપમ રૂપ અને ગુણોનું માહાત્મ્ય શીલ વડે જ થાય છે. અહીં ગજસિંહકુમારનું ઉદાહરણ છે. (૯૬)

જે સદા અવદ્ય કાર્યને છોડવાપૂર્વક પર્વતિથિને પાળે છે તે શ્રી રત્નશેખરરાજાની જેમ મુક્તિસુખને સાધે છે. (૯૭)

છત્રીસ ગુણોથી યુક્ત અને શુદ્ધ પ્રરૂપણા કરનાર તીર્થંકર સમાન એવા શ્રી ગણિવર આનંદવિમલસૂરિની જેમ પોતે તરે છે અને બીજાને તારે છે. (૯૮)

પ્રતિરૂપ આદિ ગુરુના ગુણથી યુક્ત અને વૈરાગ્યથી યુક્ત જે આચાર્ય વિજય દાનસૂરિની જેમ ગણના ભારને ધારણ કરે છે, તે તીર્થંકર સમાન શોભાને પામે છે. (૯૯)

જે સૂત્ર-અર્થ રૂપી રત્નથી ભરેલા બાર અંગોને ભણે છે અને ભણાવે છે તે તપાગચ્છમાં ઉપાધ્યાય રાજવિમલની જેમ શોભે છે. (૧૦૦)

શ્રીહીરવિજયસૂરિના પ્રસાદથી રાજવિમલના શિષ્ય કવિ યશોવિજયે ઉપદેશરત્નાકર બનાવ્યો. (૧૦૧)

જ્યાં સુધી પૃથ્વી પર સૂર્ય, ચંદ્ર અને સમુદ્રો સ્થિર છે ત્યાં સુધી ઘણાં લોકો દ્વારા જોવાતો ઉપદેશરત્નાકર જય પામો. (૧૦૨)

મહોપાધ્યાયશ્રી રાજવિમલગણિના શિષ્ય

પં.જસવિજયગણિ દ્વારા

ગણિશ્રેષ્ઠ શ્રી ભીમર્ષિના વાંચન માટે

રચાયેલો ઉપદેશરત્નાકર ગ્રંથ સમાપ્ત થયો.

● ● ●

प्रथमं परिशिष्टम्

उपदेशरत्नाकरोपदिष्टविषयसूचिः

अनु.	विषयः	दृष्टान्तः	गाथा
१	अचौर्यम्	महाबलः	५५
२	अनित्यभावना	प्रत्येकबुद्धमुनयः	८३
३	अनित्यभावना	इन्द्रः	८८
४	अर्हद्भक्तिः	मरुदेवी	६
५	अलोभः	वज्रर्षिः	४२
६	अविचारितकार्यकरणम्	जयदेवः	२८
७	अविरोधः	वेश्या	६४
८	आत्मपरतारणम्	पुण्डरीकोत्पन्नः शुकः	९
९	इन्द्रियजयः	विजयः	५७
१०	उत्तमपुत्रः	प्रद्युम्नकुमारमाता	९१
११	उत्तममैत्री	मुनिसुव्रततीर्थङ्करः	१३
१२	उत्तमसङ्गः	प्रभाकरः	४७
१३	उत्तमसङ्गः	हासप्रहासस्वामी	९३
१४	उत्तमसङ्गः	सेचनकस्तयुगलम्	९४
१५	उपदेशः	ब्रह्मदत्तः	७१
१६	उपदेशः	नलवर्मा	७१
१७	उपदेशश्रवणम्	अर्जुनमाली	९०
१८	उपशमः	कूरगडुः	४९
१९	करुणा	मेघरथः	११
२०	कामान्धता	सूर्यकान्ता	३०
२१	कृतघ्नता	कोणिकः	२९
२२	क्रोधः	मण्डूकीध्वंसक्षपकः	५०
२३	क्रोधत्यागः	स्कन्दकशिष्याः	१४
२४	गाथाश्रवणम्	रोहचौरः	८९

२५	गुरूपदेशः	वृषभस्य सुताः	१०
२६	चारित्रम्	सम्प्रतिराजा	७०
२७	चित्तपरिणामः	प्रसन्नचन्द्रः	३९
२८	छलना	अभयकुमारः	६०
२९	छलना	सुवर्णकारः	८४
३०	जिनगृहजीर्णोद्धारः	सज्जनः	७५
३१	जिनद्रव्यभक्षणम्	लक्ष्मीपुञ्जः	७३
३२	जिनधर्मपक्षपातः	ललिताङ्गः	२२
३३	जिनधर्मरागः	उद्विग्नघृष्टः	६६
३४	जिनधर्मरागः	मङ्गलकलशः	८५
३५	जिनधर्मविरोधः	सज्जनः	२२
३६	जिनपूजा	कुमारपालः	७८
३७	जिनभक्तिः	आरामशोभा	२३
३८	जिनभवननिर्माणम्	विमलः	७७
३९	जिनेन्द्रपूजा	श्रेणिकराजा	३
४०	जीवदया	वत्सराजः	८६
४१	जीवरक्षा	हरिबलमत्स्यी	२४
४२	जीवरक्षा	भीमकुमारः	४८
४३	तपः	हरिकेशबलः	४३
४४	तपः	वसुदेवः	४४
४५	तपः	सहस्रमल्लः	६५
४६	दया	विक्रमशूरः	६१
४७	दानम्	प्रथमतीर्थङ्करः	२
४८	दानम्	शालिभद्रः	३६
४९	दानम्	चन्द्रधवल-धर्मदत्तौ	५३
५०	दानम्	सुमित्रः	८७
५१	देवगुरुधर्मप्रशंसा	सोमः	५२
५२	देवगुरुधर्मावहेलना	भीमः	५२

५३	धर्मानुरागः	नमिराजः	८
५४	नमस्कारस्मरणम्	पुलिन्दमिथुनम्	२१
५५	निन्दा	वृद्धमहिला	९६
५६	नियमपालनम्	कमलश्रेष्ठी	३८
५७	परधनानाहरणम्	सिद्धदत्तः	२६
५८	परपीडाकरवचनत्यागः	मेतार्यमुनिः	१७
५९	परपीडाकरवचनत्यागः	मुनिपतिः	६७
६०	परमहिलासङ्गत्यागः	कुलध्वजः	२७
६१	पर्वतिथिपालनम्	रत्नशेखरराजः	९८
६२	पितृवचननिर्वहणम्	वाग्भटः	७६
६३	पुण्यम्	विद्याविलासः	९२
६४	प्रत्याख्यानम्	वङ्कचूलः	१९
६५	प्रत्याख्यानम्	रूपसेनः	८१
६६	बुद्धिः	धनपतिः	८२
६७	बुद्धिः	रोहकप्रमुखः	९५
६८	ब्रह्मचर्यम्	स्थूलभद्रः	३२
६९	भवितव्यता	जनमेजयराजा	६८
७०	भावः	आषाढभूतिः	६३
७१	मातृपितृभक्तिः	आर्यरक्षितः	३७
७२	मातृपितृभक्तिः	कूर्मापुत्रः	६२
७३	यतना	सुषढः	६९
७४	युवतिसङ्गत्यागः	काष्ठश्रेष्ठी	५६
७५	लोभः	वेश्या	३१
७६	लोभः	चत्वारः सुवर्णपुरुषाः	४१
७७	लोभत्यागः	प्रभवः	७२
७८	विनयः	विक्रमशूरः	३४
७९	विनयपूर्वकाध्ययनम्	श्रेणिकः	५८
८०	विवेकः	सुमतिशूरः	३५

८१	विषयविरक्तिः	जिनपालः	४०
८२	विषयासक्तिः	जिनरक्षः	४०
८३	वैय्यावृत्त्यम्	बाहुबलिः	५
८४	शीलम्	सुदर्शनः	१८
८५	शीलम्	सुन्दरराजः	५४
८६	शीलम्	शीलवती	८०
८७	शीलम्	गजसिंहकुमारः	९७
८८	संयमः	सनत्कुमारः	७
८९	सङ्घरक्षा	विष्णुमुनिः	२०
९०	सत्त्वम्	अजापुत्रः	७९
९१	सत्यम्	वसु-पर्वत-नारदाः	२५
९२	सदोषसम्यक्त्वम्	गन्धारः	४६
९३	सन्तोषः	रत्नसारः	४५
९४	समता	सुकौशलः	१२
९५	समभावः	वल्कलचीरिः	५१
९६	सम्यक्त्वम्	कार्तिकश्रेष्ठी	१५
९७	सहनम्	गजसुकुमारः	१६
९८	साधारणजिनद्रव्यभक्षणम्	सागरश्रेष्ठी	७४
९९	साधुभक्तिः	विष्णुः	३७
१००	साधुसंविभागपूर्वकभोजनम्	भरतः	४

द्वितीयं परिशिष्टम्

उपदेशरत्नाकरोपदिष्टदृष्टान्तसूचिः

अनु.	दृष्टान्तः	विषयः	गाथा
१	अजापुत्रः	सत्त्वम्	७९
२	अभयकुमारः	छलना	६०
३	अर्जुनमाली	उपदेशश्रवणम्	९०
४	आरामशोभा	जिनभक्तिः	२३
५	आर्यरक्षितः	मातृपितृभक्तिः	३३
६	आषाढभूतिः	भावः	६३
७	इन्द्रः	अनित्यभावना	८८
८	उद्विग्नघृष्टः	जिनधर्मरागः	६६
९	कमलश्रेष्ठी	नियमपालनम्	३८
१०	कार्तिकश्रेष्ठी	सम्यक्त्वम्	१५
११	काष्ठश्रेष्ठी	युवतिसङ्गत्यागः	५६
१२	कुमारपालः	जिनपूजा	७८
१३	कुलध्वजः	परमहिलासङ्गत्यागः	२७
१४	कूरगडुः	उपशमः	४९
१५	कूर्मापुत्रः	मातृपितृभक्तिः	६२
१६	कोणिकः	कृतघ्नता	२९
१७	गजसिंहकुमारः	शीलम्	९७
१८	गजसुकुमारः	सहनम्	१६
१९	गन्धारः	सदोषसम्यक्त्वम्	४६
२०	चत्वारः सुवर्णपुरुषाः	लोभः	४१
२१	चन्द्रधवल-धर्मदत्तौ	दानम्	५३
२२	जनमेजयराजा	भवितव्यता	६८
२३	जयदेवः	अविचारितकार्यकरणम्	२८

२४	जिनपालः	विषयविरक्तिः	४०
२५	जिनरक्षः	विषयासक्तिः	४०
२६	धनपतिः	बुद्धिः	८२
२७	नमिराजः	धर्मानुरागः	८
२८	नलवर्मा	उपदेशः	७१
२९	पुण्डरीकोत्पन्नः शुकः	आत्मपरतारणम्	९
३०	पुलिन्दमिथुनम्	नमस्कारस्मरणम्	२१
३१	प्रत्येकबुद्धमुनयः	अनित्यभावना	८३
३२	प्रथमतीर्थङ्करः	दानम्	२
३३	प्रद्युम्नकुमारमाता	उत्तमपुत्रः	९१
३४	प्रभवः	लोभत्यागः	७२
३५	प्रभाकरः	उत्तमसङ्गः	४७
३६	प्रसन्नचन्द्रः	चित्तपरिणामः	३९
३७	बाहुबलिः	वैय्यावृत्त्यम्	५
३८	ब्रह्मदत्तः	उपदेशः	७१
३९	भरतः	साधुसंविभागपूर्वकभोजनम्	४
४०	भीमः	देवगुरुधर्मावहेलना	५२
४१	भीमकुमारः	जीवरक्षा	४८
४२	मङ्गलकलशः	जिनधर्मरागः	८५
४३	मण्डूकीध्वंसक्षपकः	क्रोधः	५०
४४	मरुदेवी	अर्हद्भक्तिः	६
४५	महाबलः	अचौर्यम्	५५
४६	शीलवती	शीलम्	८०
४७	मुनिपतिः	परपीडाकरवचनत्यागः	६७
४८	मुनिसुव्रततीर्थङ्करः	उत्तममैत्री	१३
४९	मेघरथः	करुणा	११
५०	मेतार्यमुनिः	परपीडाकरवचनत्यागः	१७
५१	रत्नशेखरराजः	पर्वतिथिपालनम्	९८

५२	रत्नसारः	सन्तोषः	४५
५३	रूपसेनः	प्रत्याख्यानम्	८१
५४	रोहकप्रमुखः	बुद्धिः	९५
५५	रोहचौरः	गाथाश्रवणम्	८९
५६	लक्ष्मीपुञ्जः	जिनद्रव्यभक्षणम्	७३
५७	ललिताङ्गः	जिनधर्मपक्षपातः	२२
५८	वङ्कचूलः	प्रत्याख्यानम्	१९
५९	वज्रर्षिः	अलोभः	४२
६०	वत्सराजः	जीवदया	८६
६१	वल्कलचीरिः	समभावः	५१
६२	वसुदेवः	तपः	४४
६३	वसु-पर्वत-नारदाः	सत्यम्	२५
६४	वाग्भटः	पितृवचननिर्वहणम्	७६
६५	विक्रमशूरः	दया	६१
६६	विक्रमशूरः	विनयः	३४
६७	विजयः	इन्द्रियजयः	५७
६८	विद्याविलासः	पुण्यम्	९२
६९	विमलः	जिनभवननिर्माणम्	७७
७०	विष्णुः	साधुभक्तिः	३७
७१	विष्णुमुनिः	सङ्घरक्षा	२०
७२	वृद्धमहिला	निन्दा	९६
७३	वृषभस्य सुताः	गुरूपदेशः	१०
७४	वेश्या	अविरोधः	६४
७५	वेश्या	लोभः	३१
७६	शालिभद्रः	दानम्	३६
७७	श्रेणिकः	विनयपूर्वकाध्ययनम्	५८
७८	श्रेणिकराजा	जिनेन्द्रपूजा	३
७९	सज्जनः	जिनगृहजीर्णोद्धारः	७५

८०	सज्जनः	जिनधर्मविरोधः	२२
८१	सनत्कुमारः	संयमः	७
८२	सम्प्रतिराजा	चारित्रम्	७०
८३	सहस्रमल्लः	तपः	६५
८४	सागरश्रेष्ठी	साधारणजिनद्रव्यभक्षणम्	७४
८५	सिद्धदत्तः	परधनहरणम्	२६
८६	सुकौशलः	समता	१२
८७	सुदर्शनः	शीलम्	१८
८८	सुन्दरराजः	शीलम्	५४
८९	सुमतिशूरः	विवेकः	३५
९०	सुमित्रः	दानम्	८७
९१	सुवर्णकारः	छलना	८४
९२	सुषढः	यतना	६९
९३	सूर्यकान्ता	कामान्धता	३०
९४	सेचनकसुतयुगलम्	उत्तमसङ्गः	९४
९५	सोमः	देवगुरुधर्मप्रशंसा	५२
९६	स्कन्दकशिष्याः	क्रोधत्यागः	१४
९७	स्थूलभद्रः	ब्रह्मचर्यम्	३२
९८	हरिकेशबलः	तपः	४३
९९	हरिबलमत्स्यी	जीवरक्षा	२४
१००	हासप्रहासस्वामी	उत्तमसङ्गः	९३

तृतीयं परिशिष्टम्

उपदेशरत्नाकरस्थविशेषनामसूचिः

अनु.	विशेषनाम	गाथा
१	अर्बुदः	७७
२	आनन्दविमलसूरिः	९९
३	दमदन्तर्षिः	२१
४	दानसूरिः	१००
५	पुण्डरीकः	९
६	प्रदेशिराजा	३०
७	भरतः	३
८	यशोविजयः	१०२
९	राजविमलः	१०१, १०२
१०	लोमसः	८८
११	सज्जनः	२२
१२	हासाप्रहासे	९३
१३	हीरविजयसूरिः	१०२

चतुर्थं परिशिष्टम्

संदर्भग्रंथसूचि

अनु./ ग्रंथनाम/ कर्ता/ संपादक/ प्रकाशक/ आवृत्ति/ वर्ष

१. जिनरत्नकोश/ हरि दामोदर वेलणकर/ भांडारकर प्राच्य विद्या संशोधन केंद्र, पुणे/ प्रथम/ ई.१९४४

२. जैन कथा सूचि/ आ.वि.जिनेंद्रसू./ श्री हर्षपुष्पामृत जैन ग्रंथमाला लाखाबावळ-शांतिपुरी(सौराष्ट्र)/ प्रथम/ वि.सं.२०६७

३. जैन परंपरानो इतिहास भाग१-४/ मु.दर्शनवि., मु. ज्ञानवि., मु.न्यायवि./ आ.वि. भद्रसेनसू./ श्री यशोविजयजी जैन आराधना भवन पालीताणा/ प्रथम/२०६२

४. जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास/ श्री मोहनलाल दलीचंद देसाई/ आ.विजय मुनिचंद्रसूरि/ आ.ओंकारसूरि ज्ञानमंदिर सुभाषचोक, गोपीपुरा, सूरत/ २०६२

५. पाइअसद्दमहण्णवो/ पं.हरगोविंददास त्रिकमचंद सेठ/ प्राकृत ग्रंथ परिषद्, वाराणसी-५/ द्वितीय/ वि.सं.२०२०

६. वृत्तरत्नाकर/ आ.मधुसूदनशास्त्री/ चौखंबा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी/ चतुर्थ/ वि.सं. २०६९

७. शब्दरत्नमहोदधि/पं.मुक्तिवि.गणि/ अंबालाल प्रेमचंद शाह/ श्रीविजयनीतिसूरीश्वरजी जैन पुस्तकालय ट्रस्ट अमदाबाद-१/ तृतीय/ वि.सं.२०६१

८. शब्दार्थकौस्तुभ/ वि.चक्रवर्ति श्रीनिवास गोपालाचार्य/ बाप्को प्रकाशन, बेंगलूरु प्रेस्, बेंगलूरु/ दशम/ २०१७

९. हीरसुंदर महाकाव्य/ पं. देवविमलगणि/ मु.रत्नकीर्तिवि./ श्री जैन ग्रंथ प्रकाशन समिति खंभात/ वि.सं.२०५२

१०. हीरसौभाग्यम्/ पं. देवविमलगणी/ श्री कालन्द्री जैन श्वे. मू. संघ कालन्द्री, राजस्थान/ प्रथम/ वि.सं.२०४१

प्राचीन श्रुतसंपदा के समुद्धार के लिए समुदार सहयोग देनेवाले महानुभावों की नामावली

श्रुतसमुद्धारक

श्रीमती चंद्रकलाबेन सुंदरलाल शेठ परिवार (मांगरोळ हाल- पुणे)

श्रुतरत्न

श्री भाईश्री (इंटरनेशनल जैन फाउंडेशन, मुंबई)

श्रुतसंरक्षक

श्री हसमुखभाई दीपचंदभाई गार्डी (दुबई)

श्री भवानीपुर जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ (कोलकाता)

श्री दीपकभाई विनोदकुमार शहा (तळेगाव दाभाडे, पुणे)

पूज्य सा.श्री **जिनरत्नाश्रीजी** म. की प्रेरणा से

श्री अंकलेश्वर श्वे.मू. जैन संघ (अंकलेश्वर)

श्रीमती ज्योतिबेन नलिनभाई जीवतलाल दलाल परिवार

श्री माणेकचंद नेमचंद शेठ चॅरिटेबल ट्रस्ट, मुंबई।

श्रुतस्तंभ

पू.सा.श्री **हर्षरेखाश्रीजी** म.की प्रेरणा से

श्रीमती वसंतप्रभाबेन कांतिलाल शाह (पुणे)

पू.आ.श्री **विश्वकल्याणसू.**म.की प्रेरणा से श्री पद्ममणि जैन श्वे.मू. ट्रस्ट

पू.आ.श्री **राजरत्नसू.**म.की प्रेरणा से श्री जवाहरनगर

श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (गोरेगाव, मुंबई)

हितेन नलिनभाई दलाल

श्रुतभक्त

श्री शांतिकनक श्रमणोपासक ट्रस्ट (सुरत)

श्री हसमुखलाल चुनिलाल मोदी चॅरिटेबल ट्रस्ट (तारदेव, मुंबई)

श्री पार्श्वनाथ श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (मुंबई)

श्री ऋषभ अपार्टमेंट महिला मंडल (प्रार्थना समाज, मुंबई)

वर्धमानपुरा जैन संघ (पुणे)

जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ (दहाणुकरवाडी, कांदीवली, मुंबई)

सुजय गार्डन जैन संघ (पुणे)

श्री रविकांत चौधरी (वेपेरी, चेन्नई)

पूज्य मु.श्री **प्रशमरतिविजयजी** म. की प्रेरणा से
श्री सुमतिनाथस्वामी जैन श्वे.मू.संघ (रामदास पेठ, नागपुर)

पू. सा.श्री **तत्त्वरक्षिताश्रीजी** म.सा. की प्रेरणा से
श्री सीमंधर शांतिसूरि श्राविका संघ, व्ही.व्ही.पुरम्, बेंगलोर।

पू.पं.श्री **मोक्षरति-तत्त्वदर्शनवि.**ग. की प्रेरणा से
श्री अलकापुरी जैन श्वेतांबर मुर्तिपूजक संघ, वडोदरा।

श्रीम. कल्पनाबेन एवं सुधीरभाई एस. कापडिया परिवार, (मुंबई)

श्री मरचन्ट सोसायटी जैन संघ, अहमदाबाद

श्रुतप्रेमी

श्री गोडीजी टेम्पल ट्रस्ट (पुणे)

श्री गोडीजी टेम्पल ट्रस्ट (पायधुनी, मुंबई)

श्री रतनचंदजी ताराचंदजी परमार (पुणे)

श्री मोहनलालजी गुलाबचंदजी बांठीया (पुणे)

श्री नगराजजी चंदनमलजी गुंदेचा (पुणे)

श्री नेमीचंदजी कचरमलजी जैन (पुणे)

श्री भरतभाई के. शाह (सुयोग ग्रुप, पुणे)

श्री सोहनलालजी टेकचंदजी गुंदेचा (पुणे)

श्री सुखीमलजी भीमराजजी छाजेड (पुणे)

श्री जैन आशापुरी ग्रुप (पुणे)

श्री महेंद्र पुनातर (मुंबई)

श्री सुधीरभाई चंदुलाल कापडिया (मुंबई)

श्री संजयभाई महेंद्रजी पुनातर (मुंबई)

प्रो.श्रीमती विमल बाफना (पुणे)

पू.सा.श्री **नंदीयशाश्रीजी** म.की प्रेरणा से श्री आंबावाडी जैन संघ (अहमदाबाद)

श्री गोवालिया टेंक जैन संघ (मुंबई)

श्री मोतीशा लालबाग रिलीजीयस चेरिटेबल ट्रस्ट (भायखला, मुंबई)

पू.आ.श्री **तीर्थभद्रसू.**म.की प्रेरणा से

जे. सी. कोठारी देरासर जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ (मलाड, मुंबई)

श्री अशोक कालिदास कोटेचा (अहमदाबाद)

श्री विमलनाथस्वामी जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (बिबवेवाडी, पुणे)

श्री मुनिसुव्रतस्वामी श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (लेकटाउन सो., पुणे)

श्री श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (सोलापुर बजार, पुणे)

पू. मुनिराज श्री **निर्मलयशविजयजी** म.सा. की प्रेरणा से

श्री जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक गुजराती पंच (मालेगाव)

सायन जैन संघ (मुंबई)

श्रुतोपासिका सा. **चंदनबालाश्रीजी** की शुभ प्रेरणा से

मातुश्री सरस्वतीबहेन कानजी वोरा (दादर, मुंबई)

पू.आ.श्री **विश्वकल्याणसू.**म. की प्रेरणा से

श्री आदिनाथ जिन मंडळ (कर्वे रोड, पुणे)

पू.सा.श्री **सूर्यमालाश्रीजी** म. की प्रेरणा से

श्री सम्यक् साधना रत्नत्रय आराधक ट्रस्ट (अहमदाबाद)

श्री नाकोडा भैरव राजस्थानी जैन टेम्पल तथा

जैन फिलॉसॉफी रिसर्च ट्रस्ट (आळंदी)

श्री आदेश्वर महाराज जैन टेम्पल ट्रस्ट (गोटीवाला धडा, पुणे)

श्री ओमप्रकाशजी नगराजजी रांका (रांका ज्वेलर्स, पुणे)

श्री सिद्धशिला ग्रुप श्री विलासजी राठोड (पुणे)

डॉ. सुमतिलाल साकळचंद गुजराथी (हस्ते - कल्याणी मेडिकल, पुणे)

श्री जैन श्वेतांबर दादावाडी टेम्पल ट्रस्ट (पुणे)

व्ही.एल. जैन (पुणे)

वीरविभु के १९ वे पट्टधर गच्छाधिपति पू. आ. श्री **हेमभूषणसूरिजी** म.सा. की पुण्यस्मृति में संघवी वीरचंद हुकमाजी आयोजित चातुर्मास समिति, पालीताणा।

गच्छाधिपति पू. आ. श्री **महोदयसूरिजी** म.सा. के अनन्य पट्टधर गच्छाधिपति पू. आ. श्री **हेमभूषणसूरिजी** म.सा. की पुण्यस्मृति में संघवी वीरचंद हुकमाजी परिवार आयोजित चातुर्मास समिति (पालीताणा)

श्रुतोपासक

श्री अर्थप्राईड जैन संघ (मुंबई)

पू.आ.श्री **कलाप्रभसागरसू.**म.की प्रेरणा से
श्री मुलुंड श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (मुंबई)

पू.मु.श्री **जिनरत्नवि.**म.की प्रेरणा से श्री आदिनाथ सोसायटी जैन संघ (पुणे)

पू. उपा. श्री **जितेंद्रमुनिजी** म.की प्रेरणा से श्रीमती सीमा जैन (होशियारपुर, पंजाब)

श्री वर्धमानस्वामी जैन चेरिटेबल ट्रस्ट (सदाशिव पेठ, पुणे)

पू.आ.श्री **तीर्थभद्रसू.**म.की प्रेरणा से मातुश्री कमळाबेन गिरधरलाल वोरा परिवार (खाखरेची, मुंबई) आयोजित उपधान तप समिति

पू.आ.श्री **तीर्थभद्रसू.**म.की प्रेरणा से मातुश्री मानुबेन माडण गुणसी गडा परिवार (थोरीयारी- मुंबई) आयोजित उपधान तप समिति

प्रताप बी. शाह (वडोदरा)

पूज्य आ.श्री **देवचंद्रसागरजी** म. की प्रेरणा से श्री आगमोद्धारक

देवर्धि जैन आगम मंदिर ट्रस्ट (पुणे)

श्री गोवालिया टैंक जैन संघ, मुंबई।

श्री मरीन ड्राईव्ह जैन आराधक ट्रस्ट, मुंबई।

पू. मु. श्री **शुक्लध्यानविजयजी** म.सा. की प्रेरणा से
श्री रिद्धि सिद्धि आदर्श श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (मलाड, मुंबई)

पू. आ.श्री **यशप्रेमसुरिजी** म.सा. की प्रेरणा से
भाववर्धक श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (अहमदाबाद)

पू.मु.श्री **पुण्यरक्षितविजयजी** म.सा.की प्रेरणा से
श्री धन्ना शालिभद्र तपागच्छ श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (मलाड, मुंबई)

श्री वर्धमान स्वामी जैन चेरिटेबल ट्रस्ट (सदाशिव पेठ, पुना)

पू. उपा.श्री **भुवनचंद्रविजयजी** म.सा. की प्रेरणा से
श्री कच्छ दुर्गापूर विशा ओसवाल मूर्तिपूजक जैन महाजन (मुंबई)

श्रुतानुरागी

श्री मुनिसुव्रतस्वामी श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (फातिमानगर, पुणे)

श्री जैन आत्मानंद सभा (फरिदाबाद, पंजाब)

पू.मु.श्री **जिनरत्नवि.**म.की प्रेरणा से श्री जिनरत्न आनंद ट्रस्ट
गोत्रीरोड श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (वडोदरा)

श्री श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ (गोरेगाव, मुंबई)

श्री मुनिसुव्रतस्वामी जिनालय (मलाड, मुंबई)

मातोश्री श्रीमती लीलाबाई अचलचंदजी जैन हस्ते - अशोक जैन (हिंगड)

चि. सांची सागर चोरडीया हस्ते - सौ सुनंदा संजय चोरडीया (जैन जागृति, पुणे)

अरिहंत वासुपूज्य स्वामी जैन श्वेतांबर ट्रस्ट (सुरत)

પ્રતિભાવ

આજે શ્રુતભવનમાં આવીને ખૂબ ખુશી અનુભવી. ઘણાં વર્ષોથી શ્રુતભવનની યશોગાથા સાંભળી હતી. આજે અનુભૂતિ કરી. ભગવાન અરિહંત પ્રભુનું શાસન જિનાગમથી જ જાજરમાન છે. વિષમકાળમાં લુપ્ત થયેલ શ્રુતને પુનઃ ઉજાગર કરવાનું કાર્ય જે ઝીણવટથી ગણિવર્ય શ્રી વૈરાગ્યરતિવિજયજી મહારાજના માર્ગદર્શન હેઠળ ચાલી રહ્યું છે તે અત્યંત અનુમોદનીય છે. જિનશાસનના તેજને દીર્ઘકાળ સુધી જયવંતુ રાખવામાં આ શ્રુતસેવાના કાર્યનો અમૂલ્ય ફાળો રહેશે. આ સેવા કાર્યને શ્રી સંઘનો - વિદ્વાનોનો વધુને વધુ સહયોગ મળતો રહે. એવી હૃદયથી મંગળકામના.

પૂ.આ.શ્રી નરરત્નસૂરીશ્વરજી મ.સા.

વીતરાગ સર્વજ્ઞ ભગવંતની શ્રુતપરંપરાને શુદ્ધ રીતે ચીરકાલીન બનાવવાનો અથાગ પ્રયત્ન કરનારી સંસ્થા એટલે શ્રુતભવન. ગણિવર શ્રી **વૈરાગ્યરતિવિજયજી** મ.સા.નું વિઝન અને શાસન પ્રત્યેની અતુટ શ્રદ્ધાની અંતઃકરણપૂર્વક અનુમોદના. તેઓશ્રીનું કાર્ય અવિરતપણે નિર્બાધ રીતે ચાલ્યા કરે એજ શાસનદેવોને પ્રાર્થના.

પૂજ્ય આ.શ્રી તીર્થભદ્રસૂરીશ્વરજી મ.સા.

આજ રોજ શ્રુતભવનમાં આવ્યા, આવ્યાની સાથે જ પરમાત્માની વાણીનો સાક્ષાત્ અનુભવ થયો, પૂ. **વૈરાગ્યરતિવિજયજી** મ.સા.ની મહેનત ખરેખર અજોડ છે, વિષમકાલ જિનબિંબ જીનાગમ ભવિયણકો આધારા આ જ સૂક્તિને પૂ. **વૈરાગ્યરતિવિ.** મ.સા. સાર્થક કરી રહયા છે. આ કાર્યમાં દિન પ્રતિદિન ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ મળે એજ પ્રભુને અભ્યર્થના.

આ. દેવચંદ્રસાગરસૂરિ મ.સા.ના
પં. દિવ્યચંદ્રસાગરજી

શ્રુતભવન અને પૂજ્ય ગણિવર્યશ્રીનો પ્રેમ જોઇ હૃદય આનંદિત બની ગયું. ગુરુભગવંતનું કાર્ય કેટલું વિશાળ અને કેટલું કઠિન છે તે એક નાની લાયબ્રેરીને જો

વ્યવસ્થિત કરી હોય તેને તરત જ ખ્યાલ આવી જાય તેમ છે. આ કાર્ય તો લાઈબ્રેરી કરતા પણ ઘણું જ કઠિન છે. આ કાર્યમાં દેવ-ગુરુ-ધર્મની કૃપા વરસતી જ રહેશે. તેમાં શંકા નથી. અને જિનશાસન રક્ષકદેવો પણ સહાયક બનશે જ. આ વિશાળ કાર્ય ભવિષ્ય માટે અતિ આવશ્યક છે. તેમાં સહુએ સહકાર, સહયોગ આપવાની જરુર છે. આપનું કાર્ય સુંદર રીતે સંપન્ન થાય. શાસ્ત્રપાઠના શુદ્ધિકરણ દ્વારા સત્યદર્શન થાય અને જિનશાસનની પ્રભાવનામાં વધારો થાય. તેવી મંગલ શુભેચ્છા આપીએ છીએ.

ડૉ. મુનિશ્રી નિરંજન
મુનિ ચેતન
(લીંબડી અજરામર સંપ્રદાય)

શ્રુતભવન માટે શું કહેવું! ભારતભરમાં કે વિશ્વભરમાં ક્યાંય નહિં તેવી (જ્ઞાન) શ્રુત ને પ્રાચીન લિપિઓને બચાવવાનો જે યજ્ઞ પૂ. વૈરાગ્યરતિવિજયજી મ.સા. એ પ્રારંભ કર્યો છે તે ખરેખર અનુમોદનીય છે. શાસનને ૨૧૦૦૦ વર્ષ સુધી ચલાવવા આ સૌથી મોટો સિંહફાળો પૂજ્યશ્રીનો છે. અમને તો એમ લાગે છે આ જોઇને તે આપણે તો આજ સુધી શાસન માટે કાંઇ જ કરી શક્યા નથી. પણ સાચે આ શ્રુતજ્ઞાન સેવા જે થઇ રહી છે ને આપની આગળ જે પણ શ્રુતસંવર્ધન માટેની ભાવના છે તે જલ્દીમાં જલ્દી પૂર્ણ થાઓ ને આપશ્રીની પાછળ આવા અનેક શાસનરક્ષક સાધુ-સાધ્વી ને શ્રાવક-શ્રાવિકા પણ તયાર થાઓ. એ જ અંતરેચ્છા.

પૂ.સા.શ્રી અર્ચિતગુણાશ્રીજી મ.સા.

નોંધ

२८

॥ सुयं मे आउसं ॥

श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन संचालित
श्रुतभवन संशोधन केंद्र, पुणे